❀ सद्गुरवे नमः ❀

अहिंसा-शुद्धाहार

(भूत-प्रेतादि खण्डन युक्त)

घाव काहि पर घालो,
जित देखो तित प्राण हमारो ।
(बीजक)
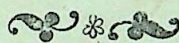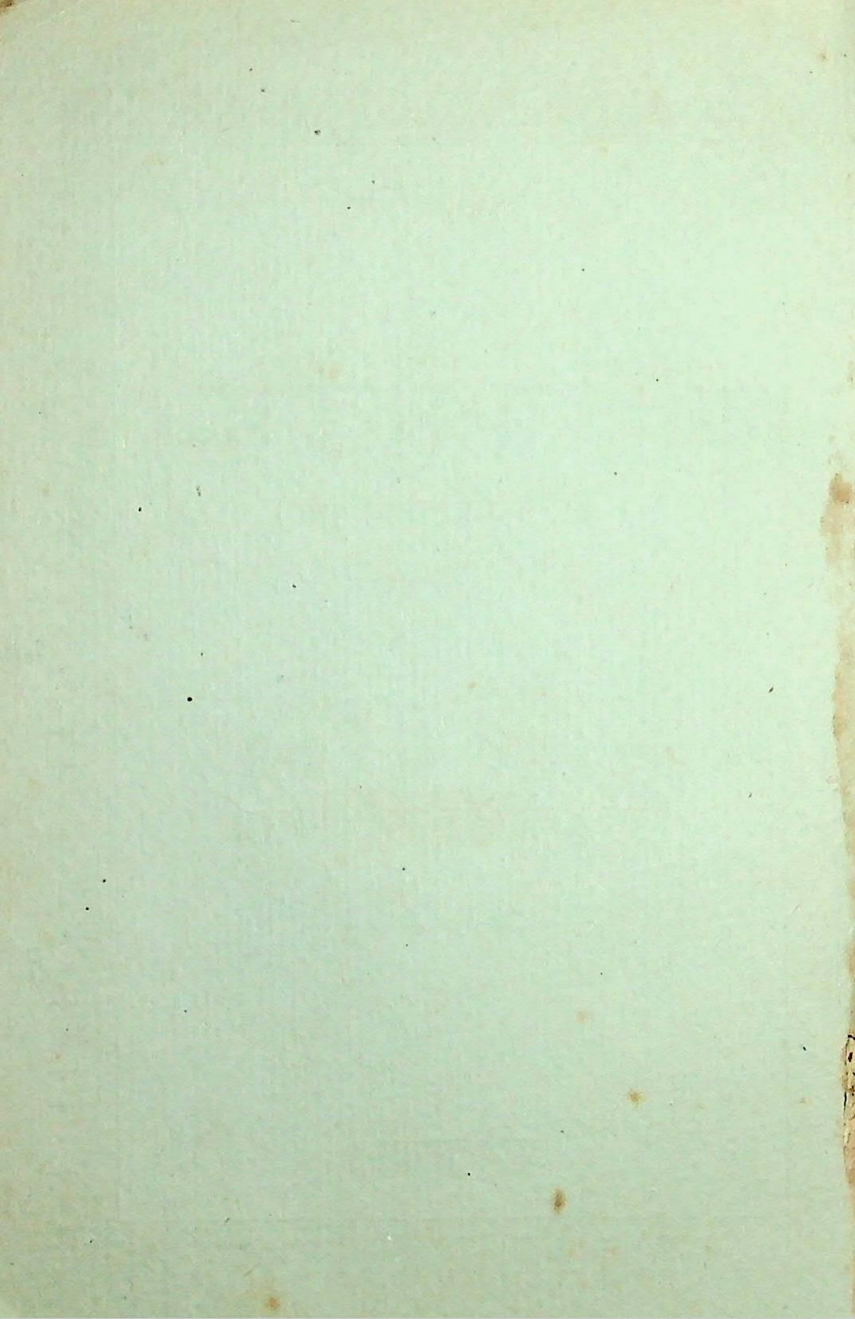
अभिलाषदास

सद्गुरवे नमः

अहिंसा शुद्धाहार

(भूत-प्रेतादि खण्डन युक्त)

पूर्वार्ध रहनि प्रबोधिनी सटीक से और उत्तरार्ध
बीजक शिक्षा से

लेखक

पारख निष्ठ सद्गुरु श्रीरामसूरत साहेब
का चरण शिष्य
अभिलाषदास

अंकुरज भखै सो मानवा, मांस भखै सो श्वान।
जीव बधै सो काल है, सदा नरक परवान॥
(पंचग्रन्थी)

प्रकाशक
साधु शरणपालदास जी
सन्तस्थान
श्री कबीर मन्दिर, बड़हरा
पो० महौबाजार, जि० गोंडा

द्वितीयावृत्ति
सत्कबीराब्द ५७६
सन् १९७५
वि० सं० २०३२

मूल्य १२)

मुद्रक
श्री विश्वेश्वर प्रेस,
बुलानाला वाराणसी-१

निवेदन

आजकल की बढ़ती हुई हिंसा-मांसाहार की प्रथा को देखकर सज्जन मनुष्य के रोंगटे खड़े हो जाते हैं। जब तनिक-सा काँटा चुभने पर उसकी पीड़ा मुझे असह्य हो जाती है; तब दूसरे प्राणी के गला घोटने पर उसको कैसा लगता होगा ? इसका गम्भीर विचार करना चाहिये। स्वयं पीड़ा न चाहना और दूसरे को पीड़ा देना, स्वयं की मृत्यु न चाहना और दूसरे को मारना, किञ्चित् स्वाद के लिये तथा अपने नश्वर शारीरिक मांस बढ़ाने के उद्देश्य से, दूसरे दीन तथा मूक जीव की हत्या करके, उसके मृतक एवं घृणित मांस-पिण्ड को अपने पवित्र मुख में रखकर चबाना—यह कितना अमानवता एवं निर्दयतायुक्त वीभत्स व्यवहार है ? अतएव प्रिय मानव बन्धु से निवेदन है कि पश्चाताप पूर्वक इस दुष्कर्म का शीघ्र त्याग करें।

इस छोटी-सी पुस्तक में हिंसा-मांसाहार और भूत-प्रेतादि का खण्डन करके अहिंसा-शुद्धाहार-मण्डन करने का प्रयत्न किया गया है। इसका पूर्वार्धं 'रहनि प्रबोधिनी सटीक' से है और उत्तरार्धं 'बीजक-शिक्षा' से है।

दोनों हाथ जोड़कर विनम्र भाव से निवेदन करता हूँ कि यदि भाषा में कहीं कड़ाई आ गयी हो, अथवा कोई प्रसंग किसी सज्जन के मन के विरुद्ध-सा लगता हो, तो प्रेमी पाठकजन कृपापूर्वक क्षमा करके केवल गुण ग्रहण करेंगे।

निवेदक—

अभिलाषदास

सद्गुरवे नमः

अहिंसा शुद्धाहार

पूर्वार्ध

(रहनि प्रबोधिनी सटीक से)

छन्द

हिंसा-आमिष कर पूर्ण त्याग।

नर पशु पक्षी कृमि कीट जीव, चलते-फिरते प्राणी सजीव।
तुम-सा सुख-दुख सबके शरीर, तन-मन-वच से मत देय पीर ॥
तेरे स्वजाति सब जीव जाग, हिंसा-आमिष० ॥ १ ॥
थल-कण भी करता असह पीर, जब चक्षु में ले आता समीर।
हा ! मूक प्राणियों पर निर्दय, मानव-दानव बन अस्त्र धरय ॥
इन्सान बना शैतान नाग, हिंसा-आमिष० ॥ २ ॥
मल-मूत्र युक्त आमिष अशुद्ध, बिन हिंसा के नहिं मिले बुद्ध।
तज भूत-प्रेत भ्रम का पहार, गुरुवर कबीर का शुचि विचार ॥
हो अखिल मनुज दायानुराग, हिंसा आमिष० ॥ ३ ॥

अहै अहिंसा जन सुख दाई, तन मन वच से सदा बलै
दुख नहिं देवै किसी जीवको, तब सब पाप विकार जलै १

किसी को दुःख न देना रूप अहिंसा धर्म प्राणियों को सुख देने वाला है, इसलिये शरीर, मन और वचन से शक्ति देकर इस अहिंसा धर्म का पालन करना चाहिये। जब किसी प्राणी को भरसक दुःख

नहीं दिया जायगा, तब सब पाप और मन की मलीनतायें जलकर नष्ट हो जायँगी ॥ १ ॥

प्रश्न—अहिंसा किसे कहते हैं ?

उत्तर—मनुष्य, पशु, पक्षी, कृमि-कीटादि को अर्थात प्राणी मात्र को जान-बूझकर या शक्ति चले तक अपने तन, मन तथा वचन से किसी प्रकार किञ्चित भी दुःख न देना—अहिंसा है।

प्रश्न—सर्प-बिच्छू सिंहादि हिंसकी जीवों को तो अवश्य मारना चाहिये, क्योंकि ये काल हैं ?

उत्तर—दूसरे को दुःख देने से या हत्या करने से सर्प-बिच्छू सिंहादि काल कहे जाते हैं। फिर वही दोष यदि मनुष्य भी धारण कर लिया तो वैसे काल मनुष्य भी हो गया। बल्कि सर्प-सिंहादि से भी मनुष्य बड़ा भारी काल हो गया। क्योंकि सर्प-बिच्छू-सिंहादि पशु, अण्डजादि नीच खानि में हैं; अज्ञान से ग्रसित हैं; लाचार हैं; उनका स्वभाव ही तामस युक्त घनघोर अन्धकारमय है। और मनुष्य सबसे उत्तम दया, क्षमा, शीलादि युक्त दिव्य सात्विक स्वभाव वाला, हर खानियों के प्राणियों से अधिक साधन सम्पन्न सामर्थ्य युक्त है। फिर अपने श्रेष्ठ एवं दिव्य स्वभाव को भूलकर यदि मनुष्य उन हिंसकी जन्तुओं के तामस युक्त स्वभाव को धारण कर लिया, तो काल से भी महाकाल और नीच से भी महानीच हुआ। इसके अतिरिक्त यह भी बात है कि पशु-पक्षी आदि अपने से लाचार जीवों को मारना यदि न्याय समझा जाय, तो जिनके सामने हम लाचार हैं, ऐसे बलवान मनुष्य यदि हमें मारने को तत्पर हो जायँ, तो किस न्याय से बचा जा सकता है ? लाचारों को मारना यदि न्याय समझा जायगा, तो हमारा बलवानों द्वारा मारे जाना न्याय ही होगा। इसलिये किसी द्वारा किसी का भी जान-बूझकर भरसक मारे जाना हिंसा है—पाप है।

साखी—जीव घात ना कीजिये, बहुरि लेत वै कान।
तीरथ गये न बाँचिहो, जो कोटि हीरा देहु दान ॥ बीजक ॥

तुलसी या संसार में, बदला कहूँ न जाय।
जो सिर काटे आन कै, अपनो होय कटाय ॥ गो०

प्रश्न—मांसाहारी कहते हैं—'मछली, मुर्गे, कबूतर, बटेर, बकरे, भेड़ तथा सूअर आदि मनुष्यों के खाने के लिये बने हैं। यदि इनको मार करके न खाया जाय, तो ये किस काम में आयेंगे ? अतः ये सब मनुष्य के अन्य व्यवहारिक कामों में अनुपयोगी (बेकार) होने से मारकर खाने ही के योग्य हैं'—इसका क्या उत्तर है ?

उत्तर—मांसाहार सिंह भेड़िया-गीध आदि का है, मनुष्य की प्रकृति मांसाहार से सर्वथा प्रतिकूल है। शुद्ध अन्न, जल, साग, फल, मूल, दूध, घृत, मेवा, मिष्टान्नादि ही मनुष्य का उत्तम आहार है। इसके अतिरिक्त प्रत्यक्ष ही रज-वीर्य से निर्मित मांस अशुद्ध एवं घृणित पदार्थ है। मांसाहार पैशाचिक एवं नारकी है। कौन भला विचारवान मनुष्य निन्द्य हड्डी-मांस रूप नर्क को मुख से चबायेगा ?

"मछली, मुर्गे, बकरे तथा सूअर आदि मनुष्य के कोई काम में नहीं आते; अतः उन्हें मार करके खा लेना चाहिये"—ऐसा कहना सर्वथा अनुचित है, पागलपन है। सब जीव अपने-अपने कर्म फल भोगों को भोगने के लिये कीट से हस्ती तक अनेक शरीर धारण किये हैं। अतएव किसी का किसी को मारने का अधिकार नहीं है। जो-जो प्राणी मनुष्य के काम में न आवें, उन्हें मारकर खा जाना ही यदि न्याय माना जाय, तो घर के अनुपयोगी (बेकार) बुड्ढे माता-पितादि को भी क्या वे मांसाहारी मार कर खा लेंगे ? और यदि खा लेंगे, तो महान नर-पिशाच समझे जायँगे। जो पशु-पक्षी आदि मनुष्यों के अन्य काम में न आवें, उन्हें मारकर खाना ही यदि न्याय हो; तो जो मनुष्य पशु-पक्षियों के काम में नहीं आते, उस मनुष्य जाति का ही यदि नाश कर दिया जाय, तो उन हिंसावादियों के न्याय से क्या दोष होगा ? यदि अनुपयोगी प्राणियों को मारना न्याय है, तो पशु तुल्य भोगी मनुष्यों की क्या उपयोगिता है ? पेट पालना और शब्द, स्पर्श,

रूप, रस तथा गन्ध— इन पंच विषयों को भोगना तथा इस पेट और भोगों के लिये नाना उद्यम करना —यही पशुओं का धन्धा है और यही परमार्थ-सत्संग-हीन मनुष्यों का धन्धा है। बल्कि असंयमी, विषय लम्पट तथा स्वार्थी मनुष्यों से पशु आदि का जीवन संयमी और परोपकारी भी है। पशु-पक्षी आदि अपने स्वार्थ या भोग के लिये तथा क्रोध वश अपने हाथ-लात-दाँत आदि से एक ही दो प्राणी को मार-काट सकते हैं। परन्तु धर्महीन मनुष्य स्वार्थ, भोग और क्रोध वश अनेक पाप कर डालते हैं। बंसी, गाजा, टापा, जाल, लाठी, तलवार, बर्छी, बन्दूक, अणुबम, एटम्बम आदि से असंख्यों प्राणियों का एक ही बार में संहार कर डालते हैं। फिर यदि धर्महीन मनुष्यों को पशुओं से श्रेष्ठ माना जाय, तो केवल नाशकारी भोग और पाप ही में भले श्रेष्ठ माना जा सकता है। न्यायतः तो नहीं। हाँ! यदि पशुओं से मनुष्यों का जीवन श्रेष्ठ है, तो धर्मपरायण परमार्थियों का। जिनका कि मुख्य धर्म ही होता है— "समस्त जीवों के प्रति सम्यक अहिंसा व्रत पालन करना।" वास्तव में जिन मनुष्यों का जीवन पशु आदि से श्रेष्ठ है, वे परमार्थी जन कीट से हस्ती तक सब प्राणियों को अपने समान जानकर उन पर दया रखते हैं। जान-बूझकर भरसक किसी की किसी प्रकार हिंसा नहीं करते और जिन मनुष्यों का पशु से भी नीच पाप परायण जीवन है, वे ही पशु आदि को अनुपयोगी बतला कर और उन्हें मार कर अपने पेट में उनका कब्र बनाना चाहते हैं। अतएव किसी प्राणी की किसी प्रकार जान-बूझ कर भरसक हिंसा नहीं करनी चाहिये।

प्रश्न— कोई जानवर किसी रोग से ग्रसित है या तालाब में जल के संकोच होने से मछलियाँ तड़फ रहीं हैं। ऐसी अवस्था में उस जानवर या मछलियों को मार डालना, उन्हें दुःखों से मुक्त करना ही है?

उत्तर— कदापि नहीं! देहधारियों के प्राण वियोग करा देने से उनका दुःख नहीं छूट सकता। कर्म रहस्य को जानने वाले यह भली

भाँति समझते हैं कि जीवों के जो कर्मानुसार दुःख-सुख भोग हैं, उन्हें उनको कहीं भी रहकर कोई भी शरीर धर कर भोगना अवश्य है। जब तक नर-तन में सद्गुरु सत्संग द्वारा ज्ञान उदय नहीं होता, तब तक बिना भोगे कर्मों का अन्त नहीं है। जो जीवों के दुःखद कर्म हैं, इस शरीर में या अन्य शरीर में उन्हें भोगने पड़ेंगे। फिर ऐसी अवस्था में उन प्राणियों को मारकर और उनको दुःख पहुँचा कर एक नवीन पाप कर्म अपने शिर पर मढ़ लेना रूप भूल का विज्ञापन करना है। कुछ उन दुखित प्राणियों का हित नहीं होता। हाँ जल-हीन मछलियों के स्थान में जल भरदे और रोगी पशु की दवा करदे—यह मानव के अधिकार की बात है। इसलिये किसी अवस्था में भी जान-बूझ कर भरसक किसी प्राणी को नहीं मारना चाहिये।

इन पंक्तियों के लेखक ने एक मुसलमान भाई से कहा—'बड़े शोक की बात है कि आप के मजहब में मांस खाना और वध (कुर्बानी) करना धर्म माना जाता है।' उन्होंने कहा— 'हमारे मजहब में कुर्बानी और गोस्तखोरी ये दो बातें बहुत बड़े दोष पूर्ण हैं। परन्तु चिंता तो यह कि हमारे मजहब के कोई फिर्के में ऐसे पीर-पैगम्बर और मौलाना नहीं होते, जो इस घृणित एवं निर्दयपन कार्य को बन्द कराने का प्रयत्न करें। बल्कि बकरीद का दिन जब करीब आता है, तब मौलाना लोग कुर्बानी अवश्य करने का गाँव-गाँव और मुहल्ला-मुहल्ला में उपदेश देते फिरते हैं। शोक! शोक!! शोक!!!'।

"सुना जाता है कि इब्राहिम अलैस्लाम जो जनाब मुहम्मद साहब के पुरुषे थे। परीक्षा लेने के लिये उनको खुदा की ओर से स्वप्न हुआ कि तुम अपने सबसे प्रिय प्राणी की हमारे नाम से कुर्बानी करो। तब इब्राहिम अलैस्लाम ने कई सौ ऊँटों की कुर्बानी की। क्योंकि अरब देश में ऊँट प्यारे (अधिक उपयोगी) जानवर हैं। परन्तु दूसरे रात में पुनः स्वप्न हुआ कि अपने प्यारे प्राणी की कुर्बानी करो। तब दूसरे दिन इब्राहिम अलैस्लाम जब जागे, तो उन्होंने सोचा कि सबसे प्रिय तो पुत्र ही होता है। अतः वे अपने पुत्र इसमाईल को बुलाकर

जंगल में गये और इसमाईल से कहे कि मैं तुम्हारा खुदा के नाम से कुर्बानी करूँगा। तब इसमाईल ने कहा कि अच्छा हमारी कुर्बानी करना है, तो चार बातें करना (१) हमारा हाथ-पैर और सब अंग कस कर बाँध देना, जिससे कि कुर्बानी के समय भयवश मैं भाग न जाऊँ। (२) आप अपने आँख में पट्टी बाँध लेंगे, जिससे कुर्बानी के वक्त आप के दिल में हमारे ऊपर मेहरबानी न आ जाय। (३) छूरे को तेज कर लीजियेगा, जिससे जल्दी हमारा गला कट जाय। (४) कुर्बानी कर देने के पश्चात हमारा कपड़ा घर पर न ले जाइएगा, नहीं तो उसे देख कर माँ को बहुत दुःख होगा।

इसमाईल के कथनानुसार जब उसका हाथ-पैर बाँध कर तथा इब्राहिम अलैस्लाम ने अपनी आँख में पट्टी बाँध कर और छूरी तेज करके ईसमाइल के गले पर चलाया तो छूरी कुन्द हो गयी और गला नहीं कटा तथा तुरन्त एक दुम्मा भेड़ा वहाँ आकर अपने आप गिर पड़ा और उसका धड़ तथा सर अलग-अलग हो गया। तब से कुर्बानी चली[१]।"

विचार करके देखिये तो, ऊपर की बात कल्पना पूर्ण ठहरती है, स्वप्न तो अपने पूर्व जागृत का भास रहता है। दूसरा कोई स्वप्न क्या दिखायेगा? और जो खुदा, ईश व दैव जीवों की हिंसा करवाना पसंद करता है, वह तो सर्वथा त्यागने ही योग्य है।

इसमाईल ने पिता अलैस्लाम से जब पट्टी बाँधने आदि चारों बातों को कहा। उस समय का दृष्य कितना भयानक, दुखप्रद एवं निर्दयता युक्त है। इब्राहीम अलैस्लाम ने अपने पुत्र की कुर्बानी करना चाहा और छूरा पुत्र के गले पर चलाया। यदि मुसलमान भाई सच्चे इस्लाम के मानने वाले हैं, तो वे भी पुत्र पर छूरी चलावें और पुत्र न मरे और उसके बदले भेड़ा-बकरादि कोई अन्य प्राणी आकर

१—यह उदाहरण मैंने एक मुसलमान भाई से मौखिक सुना था।

अपने आप मर जाय। सम्भवतः तब ऊपर की कुर्बानी वाली बात मानी जा सके। ठीक विचार दृष्टि से देखिये तो न पुत्र की कुर्बानी करनी चाहिये न पशु-पक्षी आदि किसी प्राणी की। कुर्बानी या वध करना तथा मांस खाना ही मानवता के प्रत्युत दानवता है, इन्सा-नियत के बदले शैतानियत है।

भाइयो! सद्गुरु श्री कबीर साहेब की कड़वी औषधि का सेवन कीजिये तो आपका जीव-वध और मांसाहार रूप रोग अवश्य दूर हो जायगा। आप कहते हैं—

दिन को रहत हैं रोजा, राति हनत हैं गाय।
यह खून वह बन्दगी, क्यों कर खुशी खुदाय॥
तुरुक रोजा निमाज गुजारे, बिसमिल बाँग पुकारे।
इनको बिहिस्त कहाँ से होवे, जो साँझै मुरगी मारे॥
हिन्दू की दया मेहर तुरुकन की, दोनों घट से त्यागी।
ई हलाल वे झटका मारें, आग दुनों घर लागी॥
कहहिं कबीर ये दूनों भूले, रामहिं किनहु न पाया।
ये खसी वै गाय कटावैं वादिहिं जन्म गमाया॥बीजक॥

मक्के के विरोधियों से घबराकर अपने साथियों के सहित जनाब हजरत मुहम्मद साहब मदीने जा रहे थे। उनके कुछ दुश्मन पीछे-पीछे उन्हें मारने के लिये आ रहे थे। साथियों ने कहा—साहब! पीछे से दुश्मन आ रहे हैं। सड़क में सामने एक पुलिया दिखलाती है, उसमें घुस चलें। मुहम्मद साहब जब पुलिया के पास गये, तो पुलिया के द्वार पर मकड़ी ने अपना जाल तान रखा था। मुहम्मद साहब ने सब से कहा—खबरदार! उधर जाना ठीक नहीं है। मकड़ी का जाल (घर) टूट जायगा, हिंसा होगी, अजाब (पाप) लगेगा। अतः मुहम्मद साहब दूसरी ओर से पुलिया में प्रवेश किये। दुश्मन लोग जब पुलिया के पास आये, तो एक ने कहा—इस पुलिया को तो देखो। इसमें घुस न गये हों। एक मनुष्य ने

जाकर बाहर से देखा तो पुलिया के द्वार पर मकड़ी का जाल तना है। उसने अपने साथियों से कहा – इसमें मुहम्मद न घुसे होंगे। क्योंकि इसमें यदि घुसे होते, तो मकड़ी का जाल टूट गया होता। अतः वे सब (दुश्मन) चले गये। देखिये! जीव दया करने से मुहम्मद साहब को तुरन्त अच्छा फल मिला। साथियों सहित उनकी जान बच गयी। इसीलिये कहा है—

"दया धरो तब दया तुमहिं पर, निर्दय क्रूर सदै दुख दान।
॥ भवयान ॥"

दर्द दिल के वास्ते पैदा किया इन्सान को।
वर्ना ताअत के लिये कर्रेबयाँ कुछ कम न थे ॥ जौक ॥

'दूसरे प्राणी पर दया करने के लिये ही खुदा ने इन्सान को पैदा किया। अन्यथा उसकी इबादत (उपासना) करने के लिये आसमान पर फिरिस्ते कम नहीं थे।'

पंडित को भी सलाम है, और मौलवी को भी।
मजहब न चाहिये मुझे, ईमान चाहिये ॥अकबर॥
मक्के गया मदीने गया, करबला गया।
जैसा गया था वैसा ही, चल फिर कर आ गया ॥ मीर ॥
न सुनो गर बुरा कहै कोई। न कहो गर बुरा करे कोई।
रोक लो गर गलत चलै कोई। बख्श दो गर खता करे कोई ॥गालिब॥

एक जानकार मुसलमान भाई ने कहा—'हमारे किताब में ऐसा कहीं नहीं लिखा है कि 'मांस खाना धर्म है।' लोग स्वाद वश 'मांस-खाना धर्म बतलाते हैं।' आश्चर्य तो यह है कि नापाक चीज (घृणित वस्तु) में लोग स्वाद मानते हैं।

अतएव प्रिय मुसलमान भाइयों से भी नम्र निवेदन है कि वे कुर्बानी करने तथा मांस खाने पर गम्भीरता पूर्वक विचार करें और इनका सर्वथा त्याग करें।

तालाब में स्नान करने जाइये, खखार कर जल में थूकिये या नाक का मल त्यागिये तथा टट्टी आदि कर दीजिये। इन सबको मछलियाँ दौड़कर निगल जाती हैं। उन्हीं मछलियों को मनुष्य खा जाता है। धिक्कार है मनुष्य तेरे को !

मांस गरिष्ट होता है, रोगयुक्त होता है, घृणित होता है एवं हिंसा युक्त होने से पापमय होता है। फिर भी मनुष्य ! तू उसे पसन्द करता है। तू कितना नर पिशाच हो गया है ?

चिकवा (मांस के व्यापारी) लोग रोगी-निरोगी सब बकरों को खरीद कर मारते हैं। कुछ-न-कुछ रोग तो सब प्राणियों में मिलेगा। परन्तु जो बकरे अधिक रोगी होते हैं, कम दाम पर मिलने से चिकवे उसे खरीद लेते हैं और बाजार में मारकर उसे बेचते हैं। उसी रोग युक्त मांस को खाकर मनुष्य अधिक रोग बुला लेता है।

सुना जाता है—दो मुसलमान भाइयों में झगड़ा हुआ, पूरी दुश्मनी हो गयी। एक ने एक के पुत्र को मार डाला। जिसका पुत्र मारा गया, वह बड़ा चालाक स्वभाव का था। उसने सोचा कि दुश्मन से मिलकर बदला लिया जाय। अतः उसने धैर्य धरकर कुछ दिनों में अपने दुश्मन (भाई) से दिखावटी में मित्रता कर लिया। फिर एक दिन अपने यहाँ कुटुम्ब - भोज ठाना और अपने भाई के सारे घर वालों को भोजन करने के लिये निमन्त्रण दिया और एक कुष्ट (कोढ़) रोग से अत्यन्त ग्रसित बकरे को चुपके से ले आया और उसी को मार कर तथा उसके मांस को पका कर भाई के सब घर वालों को खिला दिया, फलतः कुष्ट रोग युक्त मांस खाने वाले भाई के घर भर कुष्ट से ग्रसित हो गये।

चार खानि के किसी भी प्राणी को मारकर, उसके मांस को खाने का अधिकार किसी को भी नहीं है। यदि मनुष्य मांस खाना चाहे, तो अपने अङ्गों का मांस काट कर खाये। अपने प्राणों को हम हर क्षण बचाते हैं और दूसरे के प्राणों को हम मारते हैं। अहो ! कितनी महान निर्दयता है हम में ?

लोग मछलियों को लाकर राख में रगड़ते हैं और उनके चोइँटा (सेहरा) को छुड़ाते हैं तथा उन्हें मारते हैं। इसी पाप से मनुष्यों को दूसरे जन्म में चेचक होता है और वे भी राख पर लेटाये जाते हैं और उनके शरीर का भी चोइँटा निकाला जाता है।

मनुष्य जैसे जैसे दूसरे को पीड़ा देता है, वैसे-वैसे दूसरे जन्म में पीड़ा पाता है। इसमें राई-रत्ती भी कसर नहीं है। जो अन्य के मांस को खाते हैं, उनके भी मांस अन्य जन्म में दूसरे द्वारा खाये जायँगे। मांस का अर्थ ही होता है—माम् = मेरे को; स = वह (खायेगा) अर्थात 'मेरे को वह खायेगा'।

जो लोग पशु-पक्षियों को मारते हैं, उनके विषय में एक वैज्ञानिक ने हाई स्कूल के भूगोल में लिखा है कि 'पशुओं तथा मछलियों को मारते-मारते इन (मनुष्यों) की प्रकृति भी क्रूर हो जाती है।'

टुण्ड्रा प्रदेशीय मनुष्यों के प्रति आप लिखते हैं कि 'पशुओं तथा मछलियों को मारते-मारते इनकी प्रकृति भी बड़ी कठोर हो जाती है।'

'हमारा भोजन' नामक पुस्तक में लखनऊ के एक वैज्ञानिक ने लिखा है—"मनुष्य का भोजन अनाज, फल तथा मेवा ही होना चाहिये और जहाँ ये चीजें आसानी से मिल जाती हैं, वहाँ मांसाहार का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। भोजन की दृष्टि से मांस की किञ्चित मात्र भी आवश्यकता नहीं है। क्योंकि उससे अच्छा प्रोटीन मक्खन दूध और मेवों से प्राप्त कर सकते हैं। डाक्टर ग्रैहम का कथन है—"मुझे यह कहने में तो जरा भी संकोच नहीं है कि अन्न, तरकारियों और दूध को पर्याप्त परिमाण में ग्रहण करना ही सर्वोत्तम भोजन है।" एक दूसरे डाक्टर डेनमार्क के हैण्डहेड ने, जो भोजन विज्ञान के बहुत बड़े विशेषज्ञ गिने जाते हैं, कहा है—"विज्ञान की इस बात में कोई सच्चाई नहीं है कि पशुओं के मांस से प्राप्त किया गया प्रोटीन (प्रत्यामिन)

१—साखी—"कबीर कमाई आपनी, कभी न निष्फल जाय।
बोवै पेड़ बबूर का, आम कहाँ से खाय॥"

अर्थात जीवनसत्व मनुष्य शरीर के लिये अत्यावश्यक है। अधिक मांस खाने वालों के दाँत नष्ट हो जाते हैं। मांस में तेजाब की अधिकता होती है, जो मानव शरीर के लिये अत्यन्त हानिकारक वस्तु है।"

लुई कूने ने अपनी पुस्तक "न्यू साइन्स आफहीलिङ्ग" में लिखा है कि—"भोजन अपनी प्रकृति दशा में ही स्वादिष्ट होता है और शीघ्र पचता भी है और उसी से हमें शीघ्र शक्ति प्राप्त होती है। जो भोजन देखने, सूँघने और चखने में स्वभावतः अच्छा मालूम हो, वह श्रेष्ठ भोजन ग्रहण करने योग्य है। ऐसा भोजन केवल फल, शाक, सब्जियाँ, अन्न, दूध और मेवे ही से प्राप्त हो सकता है। इस तरह के भोजन में हर प्रकार के आवश्यक खनिज लवण पाये जाते हैं। यह भोजन मेदे या अँतड़ियों में जल्द सड़ता नहीं और इस प्रकार आँतों में विषैली वस्तुएँ एकत्र नहीं होने पातीं।"

"मांसाहारी भी परोक्ष रूप में अन्न तथा सब्ज़ी खाते हैं। क्योंकि इन्हीं वस्तुओं से जीवनयापन के तत्त्व प्राप्त करके जानवर बढ़ता है। अनाजों या तरकारियों में जो तत्त्व रहते हैं, जानवर उन्हें प्राप्त कर लेता है और मनुष्य उनके परिवर्तित रूप में मांस से प्राप्त करते हैं। क्या ही अच्छा हो कि हम (बिल्कुल मांस न खाकर) उन खाद्यों (साग सब्जियों) को उनके प्राकृतिक रूप में ही खायें।"

इस विषय में विस्तार रूप से वर्णन करते हुए अन्त में आपने कहा है—"ऊपर के विवेचन से यह स्पष्ट हो गया होगा कि हमारे भोजन में फल और शाक-सब्ज़ी की प्रधानता होनी चाहिये। इनके बाद भोजन में दूध, दूध से बनी वस्तुयें और सूखे फलों को प्रमुखता मिलनी चाहिये। अनाज का स्थान तीसरे नम्बर पर आता है।" सब के अन्त में आपने बड़े-बड़े अक्षरों में लिखकर बतलाया है—

"मेरा यह दृढ़ विचार है कि हमारे भोजन में गोस्त का कोई स्थान नहीं होना चाहिये।"

—एक वैज्ञानिक।

एक कालेज में चुने हुए सैकड़ों विद्वान लड़कों को वहाँ के प्रिंसिपल ने मांसाहार विधायक१ और अविधायक प्रसंगों पर बोलने का विषय दिया। दोनों विषयों पर अपनी-अपनी समझ और रुचि अनुसार छात्रों ने अपना-अपना विचार प्रकट किया। अन्त में प्रिंसिपल ने निर्णय करते हुए कहा—'सिंह, भेड़हा, श्वान तथा मज्जारि या चील्ह-गीध आदि पशु-पक्षियों को छोड़कर मनुष्य के भोजन में मांस का कोई स्थान नहीं होना चाहिये। एक तो मांस प्रत्यक्ष ही घृणित, अशुद्ध पदार्थ है, दूसरे रोग उत्पादक महाविकारी है, तीसरे उसमें जीवों की हिंसा होती है, जो महान पातक है।'

कहा जाता है—विलायत के एक कालेज में एक वर्ष के लिये १०० लड़कों को मांसाहार करने का और १०० लड़कों को शाकाहार (मांसाहार त्याग कर केवल अन्न, दूध तथा मेवादि खाने) का नियम दिया गया। वर्ष पूरा होने पर डाक्टरी करने से मांसाहारी १०० लड़कों में से अधिक लड़के रोगी निकले और शाकाहारी लड़के प्रायः सब स्वस्थ (निरोग) पाये गये।

इन पंक्तियों के लेखक से एक रजिस्ट्रार कानूनगो जी ने कहा—"मैं अपने स्वास्थ्य पर अधिक ध्यान रखता था; परन्तु फिर भी अस्वस्थ (बीमार) ही प्रायः रहा करता था। अधिक कष्ट होने पर एक बार एक बड़े डाक्टर से परीक्षा करवाया। उन डाक्टर ने मेरे शरीर की परीक्षा करके पूछा—आप मांस और मद्य ग्रहण करते हैं? मैंने कहा—जी हाँ! उन्होंने कहा यदि आप शीघ्र मांसाहार और मद्यपान न त्याग दिये, तो इस वर्ष के भीतर ही आपके शरीर में फालिज (लकवा) मार देगा। फलतः आप अपने स्वास्थ्य से सर्वथा हाथ धो बैठेंगे। मैंने तभी से मांसाहार और मद्यपान सर्वथा त्याग दिया। अब मेरा स्वास्थ्य बिल्कुल अच्छा रहता है"—रजिस्ट्रार कानूनगो जी ने कहा।

१—मांसाहार सिद्ध करने का भाव विधायक और निषेध करने का भाव अविधायक है।

हर मांसों में स्वाभाविक रोग होता है और पशु-पक्षियों के शारीरिक रोग भी मांसों द्वारा मांसाहारियों के शरीर पर बुरा प्रभाव डालते हैं।

हिन्दू धर्म में ऐसे कई देवी-देव स्थान हैं, जहाँ निर्दयता पूर्वक जीवों के वध होते हैं। इन देव स्थानों का वह भयानक दृश्य देख-सुन कर सज्जन के रोंगटे खड़े हो जाते हैं। गर्भ से तुरन्त के उत्पन्न हुए सुअर के बच्चों को ले जाकर पत्थर या वृक्ष की जड़ों पर पटक देते हैं और उसके पैर को पकड़ कर देव-स्थान पर मुख से रक्त चुआते हैं, वहाँ एक तीव्र खड्ग रखा रहता है, बकरों को ले जाकर उस खड्ग से गला पर मार देते हैं और उसके शिर को ले जाकर देव-स्थान पर चढ़ाते हैं। एक दो दस-पचास की संख्या में नहीं, एक दो या दस पाँच दिन नहीं। अनेकों की संख्या में नित्य निरन्तर की यही वहाँ की दशा है। वहाँ नाली में रक्त बहता है, भूले लोग उस रक्त को शिर पर स्पर्श करके अपना उद्धार मानते हैं। बहुत से ब्राह्मण-क्षत्री आदि के घर के लोग अपने लड़कों को ले जाकर वहाँ उसी नाली के रक्त में जनेऊ का स्पर्श करके उन्हें पहनाते हैं। मूर्खता अपनी पराकाष्ठा (हद) तक पहुँच गयी है।

ऐसे-ऐसे कई स्थान पर वेश्यायें भी मेले में लाकर रखी जाती हैं। हिंसा और व्यभिचार ये बड़े पाप कर्मों में से मुख्य हैं। वे दोनों कतिपय देवस्थानों के भूषण हो गये हैं। वहाँ की पृथ्वी फटकर तलातल नहीं हो जाती, जहाँ देवपूजन के रूप में ऐसे घोर पाप हो रहे हैं। और पृथ्वी जीड़ क्या फटेगी ? उसे तो कुछ ज्ञान नहीं। वहाँ जाकर या रहकर हिंसा करने-कराने वाले हिन्दू लोग जब अपनी आँख में पट्टी बाँधकर कूएँ में कूद रहे हैं, तब क्या कहा जाय ? ऐसे देवस्थानों को कसाई खाने की संज्ञा दी जाय तो क्या दोष होगा ? वहाँ पुजारी कौन रहते हैं ? पण्डे व ब्राह्मण पण्डित, हा ! शोक ! शोक !! शोक !!!

एक स्थान पर लेखक मांसाहार निषेध के विषय में शिक्षा दे रहा था। इतने में एक पण्डित जी बोल पड़े ब्राह्मण मांस नहीं खाते। और जो ब्राह्मण मांस खाता है वास्तव में वह ब्रह्मवीर्य नहीं है। बल्कि वर्णसंकरी एवं शूद्र है। मैंने कहा— भाई! ऐसा कहने में तो मुझे संकोच लगता है। परन्तु यह तो कहा ही जा सकता है कि जो मांसाहारी है, वह ब्राह्मण नहीं माना जा सकता क्योंकि मांसाहार ब्राह्मणत्व के सर्वथा प्रतिकूल है।

वास्तव में जो ब्राह्मण नामधारी मांस खाते हैं, वे ब्राह्मण नहीं हैं। किन्तु बेरहमन हैं। बेरहमन का अर्थ ही होता है (बे-रहम-मन) बे कहते हैं रहित को, रहम कहते हैं दया को और मन कहते हैं अन्तःकरण को। अतएव जिनका अन्तःकरण दया से रहित है। उन्हीं को 'बेरहमन' कहते हैं।

प्रश्न— जीव-हत्या यदि पाप है, तो इससे कोई बच ही नहीं सकता है। क्योंकि उठते-बैठते, चलते-फिरते, जीवन-निर्वाहिक धन्धे करते खेती-किसानी आदि में जीव-हत्या होती ही रहती है। कहा भी है—"बिना जीव जीवे नहीं, जीवे जीव अहार।"

उत्तर— जीव-हत्या महापाप है और इससे मनुष्य सर्वथा बच सकता है। क्योंकि उठते-बैठते, चलते-फिरते एवं जीवन-निर्वाह खेती आदि करते समय जो जीव की हत्या हो जाती है, वह अन्जान या शक्ति के बाहर की बात है। जीव-हत्या करने की इच्छा यदि किञ्चित नहीं है, बल्कि जीवों पर पूर्ण दया है। परन्तु शक्ति के बाहर के व्यवहारों में जो जीवों की हिंसा हो जाती है, उस हत्या का प्रभाव, मनुष्य के हृदय पर नहीं पड़ता। क्योंकि मन, वचन, कर्म से वह किसी को दुखाना नहीं चाहता। वह तो केवल अपने जीवन-निर्वाहिक धन्धाओं को करता है। पथिक से पूछो कि तुम क्या करते हो? तो वह कहेगा— मार्ग पर जा रहा हूँ। एक हल चलाने वाले से पूछो, तुम क्या कर रहे हो? वह कहेगा— मैं खेत जोत रहा हूँ। वे दोनों यह नहीं

कहेंगे कि हम चींटी या जीव-जन्तु को मार रहे हैं। परन्तु एक मछली मारने वाले या बकरी मारने वाले कसाई से पूछो कि तुम क्या कर रहे हो ? वे स्पष्ट कहेंगे कि हम मछली या बकरी मार रहे हैं। अतएव पथिक का पन्थ तय करना उद्देश्य है। किसान का खेत जोतना उद्देश्य है एवं व्यवहारिक कार्य करने वाले का व्यवहार कार्य पूर्ण करना ही उद्देश्य है। उनका उद्देश्य जीव-हत्या नहीं है। परन्तु एक मछुवा, बधिक, कसाई एवं मांसाहारी का उद्देश्य केवल जीव-वध करना है।

यदि कोई कहे कि "अनजान में या शक्ति के बाहर जब जीवों की हिंसा हो ही जाती है, तब हमें जान बूझ कर एवं शक्ति चले तक भी नहीं बचाना चाहिए।" तो यह महा अन्याय है। यह तो ऐसे है कि जैसे कोई कहे कि "कूयें के जल में मेढक-मछली मल-मूत्र कर देते हैं, उस जल को पीना ही पड़ता है और मल-मूत्र पर बैठी मक्खी भोजन पर बैठ जाती है। अतः भोजन में मल-मूत्र का स्पर्श हो जाता है। इस प्रकार जब हम मल-मूत्र के छूत से नहीं बच सकते, तो मल-मूत्र को खुले रूप से आहार में लेना चाहिये।" तो यह कहना और मानना महा अनर्थ है। कोई कहे कि मार्ग चलते समय में कहीं-न-कहीं काँटे पैर में चुभ ही जाते हैं या ठोकर-पत्थर लग ही जाते हैं। अतएव काँटे-ठोकर से जब पथिक का सर्वथा बचाव नहीं है। तब जान-बूझकर भी काँटे पैर में चुभाये जायँ तथा पत्थर से हाथ-पैर क्यों न तोड़ लिया जाय ?" तो यह कहना कितना पागलपन है। एक मार्ग देखकर विचार पूर्वक चलना तथा एक आँख में पट्टी बाँधकर कुआँ-खाई में कूदकर चलना—दोनों बराबर कैसे हो सकते हैं ?

'बिना जीव जीवै नहीं, जीवै जीव अहार' यह प्रमाण तो श्री कबीर साहेब के पद को तोड़कर हिंसकों ने मन गढ़न्त कल्पना किया है। बीजक में यह पूरी साखी इस प्रकार है—

साखी—जीव बिना जिव बाँचे नहीं, जिव का जीव अधार।
जीव दया करि पालिये, पंडित करो विचार॥
(बीजक साखी-१८२)

प्रश्न—प्राणी की रक्षा से प्राणी के नाश करने में अधिक लाभ है, प्रभु यीशु ने यह भेद स्पष्ट रीति से पहचान लिया है। और इसलिये उसने अपना प्राण मृत्यु लों दे दिया है, ताकि सारे संसार में नवीन आत्मिक जीवन उत्पन्न हो। मृत्यु के द्वारा जीवन उत्पन्न होता है—इसका क्या उत्तर है ?

उत्तर—किसी प्राणी का शक्ति चले तक वध करना महापाप है। जो जीव शरीर त्याग देंगे, वे दूसरे शरीर को तो धारण ही करेंगे—यह तो ठीक ही है। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं होता कि सब प्राणियों को मार-मार कर उन्हें नवीन शरीर प्राप्ति के लिये सहायता दिया जाय। इससे तो जीवों के दुःखों की केवल वृद्धि होगी और क्या होगा ? यीशु ने अपने प्राण को यों ही नहीं दिया था। बल्कि यीशु अपने को ईश्वर का पुत्र बतलाते थे। इसलिये विरोधियों ने उन्हें मार डाला। और यदि यीशु ने नवीन-जीवन उत्पन्न के लिये ही अपना प्राण दिया था, तो ऐसा मानने वाले लोग अपना प्राण क्यों नहीं देते ? मूक-लाचार पशु-पक्षियों को क्यों मारते हैं ?

"मनुष्य के अतिरिक्त पशु आदि प्राणियों को ईश्वर ने मनुष्य के मारने-खाने के लिये बनाया है।" इत्यादि-इत्यादि कल्पित बातें बनाकर जीभ के स्वार्थी लोग कहते रहते हैं। किसी कल्पित ईश्वर आदि के आधार में अपनी स्वाद-वासना की पूर्ति करना और जीव-हत्या करना महापाप है। अतएव जान-बूझकर तथा भरसक जीवों की हिंसा बचाने से मनुष्य पाप से सर्वथा बच जाता है।

साखी—बकरी पाती खात हैं, ताकर खींचत खाल।
जो नर बकरी खात हैं, ताकर कौन हवाल॥

तामस बेचे बाभना, मांस मछरिया खाय।
पाँव लगे सुख मानई, राम कहैं जरि जाय॥
अंकुरज भछै सो मानवा, मांस भछै सो श्वान।
जीव बधे सो काल है, सदा नरक परवान॥
मांस मछरिया खात हैं, सुरा पान से हेत।
ते नर नरके जात हैं, याते मानव चेत॥

मनुस्मृति में लिखा है -(१) जीव वध की आज्ञा देने वाला, (२) वध करने वाला, (३) मांस बेचने वाला, (४) मांस खरीदने वाला, (५) मांस को काटने, बनाने तथा धोने वाला, (६) रसोई में पकाने वाला, (७) मांस परोसने वाला, (८) मांस खाने वाला —ये आठ हिंसा के पाप को भोगेंगे।

अतएव चाहे शास्त्र विधि से हो, चाहे लोक विधि से हो या चाहे किसी भी प्रकार जान-बूझ कर भरसक हिंसा करना और मांस खाना महान पातक है। जिस शास्त्र, यज्ञ और धर्म में हिंसा-मांसाहार माननीय हों, वह शास्त्र अशास्त्र है, वह यज्ञ अयज्ञ है और वह धर्म अधर्म है। अतः हिंसा-मांसाहार से सज्जन दूर रहें। ऐसा नम्र निवेदन है।

प्रश्न—मांसाहारी कहते हैं, गाय-भैंस आदि का दूध खाना भी मांसाहार है। क्योंकि वह रक्त-मांस का ही रूपान्तर है। जो गाय-भैंस अधिक रक्त-मांस से सम्पन्न हृष्ट-पुष्ट होती हैं, वे अधिक दूध देती हैं। अतः दूधाहारी भी मांसाहारी ही माने जायँगे?

उत्तर— दूध खाना मांसाहार नहीं है। दूध रक्त-मांस से नहीं बनता। यदि दूध को रक्त-मांस का ही रूपान्तर माना जाय, तो भी दूध को मांस माना नहीं जा सकता। क्योंकि रूपान्तर हो जाने पर प्रायः कारण का दोष कार्य में नहीं रहता। जैसे अन्न, फल, मूल, साग आदि मल-मूत्र और खादयुक्त खेतों में होते हैं; परन्तु मल-मूत्र और खाद

के कुछ भी विकार अन्न, फल, मूल, साग आदि में नहीं आते। शहरों के निकट खेतों में मल-मूत्र अधिक-से-अधिक बिखेर कर उसी पर साग-फल इत्यादि बोते हैं। परन्तु साग-फल आदि में मल-मूत्रों का कोई दोष नहीं रहता। अब इस पर कोई कहे कि जो अन्न-फल साग-मूलादि खाता है, वह मल-मूत्र खाता है, तो कहने वाला पागल ही माना जायगा। ऐसा कहने वाले से यदि कोई कहे कि जब अन्न-साग फल-मूलादि और मल-मूत्र दोनों बराबर हैं, तब तुम अन्न-सागादि छोड़-कर केवल मल-मूत्र ही खाया करो, तो क्या वह स्वीकार करेगा? और यदि ऐसा दुरुपयोग करेगा, तो उसे लोग अच्छा मानेंगे? कदापि नहीं। अतएव दूध कभी भी मांस नहीं माना जा सकता है।

मुख्य बात तो यह है कि दूध रक्त-मांस का रूपान्तर है ही नहीं। यदि रक्त-मांस से दूध बनता होवे, तो हर गाय, भैंस, बैल, भैंसा के शरीर में रक्त-मांस है, फिर सबके शरीरों में दूध क्यों नहीं उत्पन्न होता है? दूसरी बात यह है कि दूध बच्चों का कर्म होता है, इसलिये बच्चा पैदा होने पर माता के दूध उत्पन्न होता है। जो घास-चारा आदि खाद्य पदार्थ गाय-भैंस आदि खाती हैं, उसी का रूपान्तर दूध होता है। जिसके विषय में प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि खली, नमक, अन्न, कपास का बिनौला, पीपल का पत्ता, महुआ इत्यादि अधिक दूध उत्पादक खाद्य पदार्थ यदि सायंकाल को गाय-भैंस को खिला दिया जाय, तो प्रातः काल ही वह अधिक दूध देगी। अब विचारना यह है कि खाद्य पदार्थ से रक्त-मांस और रक्त-मांस से यदि दूध बनता, तो सायंकाल के खिलाये हुये खाद्य पदार्थों का परिणाम अधिक दूध प्रातःकाल ही न मिलता, क्योंकि खाद्य पदार्थों से रक्त-मांस बनने में इससे अधिक विलम्ब लगता है। इसलिये दूध रक्त-मांस का रूपान्तर नहीं, किन्तु खाद्य पदार्थों का ही रूपान्तर है।

प्रश्न— फिर श्रीकबीरसाहेब ने बीजक में इसके विपरीत क्यों कहा है?

उत्तर— वहाँ पाखण्ड खण्डन के ध्येय से वैसा कहे हैं। दूध का निषेध उन्होंने नहीं किया है।

प्रश्न— दूध दुहने से गाय-भैंस आदि मादा को कष्ट होता है, क्योंकि उसके अधिक खाद्य-अंशों का रक्त न बनकर दूध बन जाता है, अतः वे निर्बल रहती हैं। दूसरी बात— जब दूध बच्चों का कर्म है, तब उस दूध को दुह कर मनुष्यों को लेना यह भी पाप है। क्योंकि दूसरे का कर्म-फल लेना पाप ही है। इन दो कारणों से गाय-भैंस इत्यादि से दूध लेना और खाना हिंसा ही मानी जायगी ?

उत्तर— न्याय पूर्वक गाय-भैंस से दूध लेना और खाना हिंसा नहीं है। गाय-भैंस आदि के अधिक खाद्य - अंशों का रक्त न बनकर जो दूध बनता है, वह बीयायी (जनी) गाय-भैंस का स्वाभाविक ही है, उसको कोई रोक नहीं सकता। यह भी बात नहीं है कि सब खाद्य - अशों का दूध ही बन जाता है। कुछ अंश का दूध बनता है और कुछ का रक्त बनता है। दूध देने वाली सब गाय-भैंस निर्बल ही रहती हों, यह भी बात नहीं है। दूध न देने वाली भी निर्बल रहती हैं और दूध देने वाली भी मोटी ताजी रहती हैं। गाय-भैंस का दूध दुहने से उनको कष्ट नहीं होता। बल्कि यदि दूध न दुहा जाय, तभी उसे कष्ट होगा और स्थन से सर्वथा दूध न निकलने से बल्कि दूध रुककर मादा के शरीर में रोग उत्पन्न कर देगा। अतः गाय-भैंसादि को पेटभर खिला-पिलाकर और उचित सेवाकरके उनका दूध दुहना उन्हें कष्ट देना नहीं है। दूसरी बात दूध बच्चों का कर्म फल है, यह तो बिल्कुल सत्य है, परन्तु गाय-भैंसादि की रक्षा तथा सेवा-सुश्रूषा करने वाले मनुष्य का भी तो कर्म-फल उसी में सम्मिलित है। इसलिये जो गाय-भैंस का दूध मनुष्य लेता है, वह अपने पुरुषार्थ का ही फल लेता है। हाँ ! इसमें यह तो अवश्य ध्यान रखना चाहिये कि गाय-भैंस आदि जिस मादा से दूध लिया जाय, उनके बछड़ों को पेटभर दूध पी लेने देवे, फिर उससे जो बाकी बचे, उसी को मनुष्य दुह कर लेवे। और जब बछड़ा कुछ बड़ा हो

जाय, अर्थात अन्न-चारा खाने लगे। तब यदि दूध लेने की इच्छा हो, तो बछड़े का पेट कुछ दूध से कुछ अन्न-चारा आदि से भर कर मादा का दूध लिया जाय। सारांश यह कि बछड़े को तनिक भी कष्ट न देते हुए, उसका पूरा पेट भरकर बाकी दूध लिया जाय। और जो बछड़े का पेट काटकर—उसे भूखा रखकर अधिक दूध के लोभ से दूध लेगा, वह अवश्य हिंसकी माना जायगा।

अतएव गाय-भैंसादि मादा का पूरा पेट भरकर उसकी उचित सुरक्षा करके और बछड़े का पूरा पेट भरकर गाय-भैंस आदि से दूध लेना कोई हिंसा नहीं है। बल्कि सर्वथा न्याय युक्त है।

प्रश्न—अन्न, दूध, महुआ तथा गुड़ आदि उत्तम वस्तुओं का रूपान्तर होने से शराब उत्तम पेय क्यों नहीं है?

उत्तर—महान नशाकारी मनुष्य को पशु और पिशाच बना देने वाला शराब उत्तम पेय कदापि नहीं हो सकता। उत्तम पदार्थों का रूपान्तर उत्तम ही नहीं हुआ करता। जैसे साग-पूड़ी, दाल-भात तथा हलुआ-पेड़ा इत्यादि उत्तम पदार्थों को खा लेने पर उसका रूपान्तर मल-मूत्र हो जाता है। यह कोई नियम नहीं है कि उत्तम पदार्थों का उत्तम ही रूपान्तर होता है। कहीं उत्तम पदार्थों-कारणों का उत्तम ही रूपान्तर होता है। कहीं उत्तम कारणों का मध्यम और मध्यम कारणों का उत्तम रूपान्तर-कार्य हो जाता है। कहीं मध्यम कारणों का मध्यम ही रूपान्तर होता है। उत्तम कारण हो और उसका उत्तम रूपान्तर हो, यह तो ठीक है। कहीं-कहीं कारण और उसका रूपान्तर कार्य-पदार्थ दोनों की उत्तमता देखी जाती है। और अधिकांश रूप में कारण का गुण-दोष न विचार कर केवल रूपान्तरित कार्य-पदार्थ जो सामने है। उसी की शुद्धि देखनी पड़ती है, न तो कारण की उत्तमता देख कर उसके हर रूपान्तरित कार्य-पदार्थों का ग्रहण ही किया जा सकता है, और न तो कारण की मध्यमता देखकर उसके हर रूपान्तरित कार्य-पदार्थों को त्यागा ही जा सकता है। यदि वर्तमान में

मादकता रहित शुद्ध पवित्र एवं सात्त्विक परीक्षा में ठहरे, तो उस पदार्थ को ग्रहण करना न्याय से उचित प्रतीत होता है। और जो हिंसा, मांस तथा नशा युक्त है, वह पदार्थ कभी भी ग्रहण करने योग्य नहीं है।

प्रश्न— अण्डा-मांस में विटामिन (जीवनसत्व) अधिक रहता है। अत. उसे स्वास्थ्य के लक्ष्य से खाना चाहिये ?

उत्तर— इस बात का खण्डन युक्ति-प्रमाण से प्रथम ही हो गया है। मांस रोगमय है, उससे अच्छा जीवनसत्व साग-फल तथा दूध-अन्न में है। मांस-अण्डा खाने वाले बहुत से निर्बल-रोगी देखे जाते हैं और शाकाहारी बहुत से शक्तिशाली एवं स्वस्थ देखे जाते हैं। अतः मांसाहार सब भाँति से निषेध करने योग्य है।

प्रश्न - शरीर के अस्वस्थ हो जाने पर डाक्टर - वैद्य यदि यह बतलावें कि शराब, मांस, मछली तथा अण्डा खाओ, तो रोग अच्छा हो जायगा। तो भयंकर रोग से छूटने के लिये अपने जीवन-रक्षा निमित्त यदि शराब, मांस, मछली तथा अण्डा खा लेवे , तो क्या दोष है ?

उत्तर— महान दोष है। भला, सर्व रोगों का घर जो मांस है, उसके खाने से रोग अच्छा क्या होगा ? रह गया, उसके खाने से यदि कुछ दिन के लिये रोग अच्छा ही हो जाय, तो यह बात नहीं है कि फिर जीवन भर रोग नहीं आयेगा या मरण नहीं होगा। पूर्व जन्मकृत पाप-कर्मों का भोग सबको भोगना पड़ेगा। चाहे कितना भी मांस, शराब, अण्डा इत्यादि खाये, परन्तु एक दिन मरना अवश्य पड़ेगा। क्या मांसाहारी जीवन भर स्वस्थ ही रहते हैं ? क्या उनकी काया अविनाशी हो जाती है ? शरीर को भी त्यागकर धर्म की रक्षा करनी चाहिये। धर्म-रक्षा और धर्म-पालन के लिये शरीर है, शरीर के लिये धर्म नहीं है।

प्रश्न— पृथ्वी के उत्तरी भाग में अर्थात उत्तरी ध्रुव क्षेत्र में टुण्ड्रा नामक प्रदेश पड़ते हैं। सुना जाता है, वहाँ छह महीने का दिन और छह महीने की रात होती है, वहाँ ठण्ढक अधिक होती है, नौ महीने केवल

बर्फ-ही-बर्फ से वहाँ की पृथ्वी अधिकांश ढकी हुई रहती है। अतः वहाँ अन्न तथा फल-मूलादि बिलकुल नहीं होते। वहाँ उन बर्फों में बड़ी-बड़ी मछलियाँ होती हैं। उन्हीं मछलियों को मार कर वहाँ के लोग खाते हैं। मछली-मांस के अतिरिक्त उन लोगों के जीवन-निर्वाह का कोई अन्य आधार नहीं है। अतः वहाँ के लोग हिंसा-मांसाहार से कैसे बच सकते हैं ?

उत्तर—आप प्रश्नकर्ता तो सब प्रकार सुविधाजनक, पवित्र, धार्मिक भारत-भूमि के निवासी हैं। यहाँ तो अन्न, जल, फल, मूल, दूध, घृत, मेवा तथा मिष्टान्नादि पर्याप्त (अधिक) मात्रा में प्राप्त हैं। फिर आप और हम सब को हिंसा-मांसाहार का सर्वथा त्याग करना चाहिये। यद्यपि यह धर्मोपदेश संसार के अखिल मानव समाजके लिये है। तथापि देश, परिस्थिति और वातावरण की कठिनाइयों से घिरे (बँधे) हुए देशों के लिये यहाँसे कोई विधान नहीं बनाया जा सकता। हाँ ! पवित्र भूमि हम भारत वासियों के लिये सब प्रकार की सुविधा है, परमार्थ का ज्ञान है। अतः हमें निरामिष - शाकाहारी और पूर्ण अहिंसकी होना चाहिये। टुण्ड्रा आदि जिस देश में विवश होकर मांस खाना पड़, समझना चाहिये कि उस देश के मनुष्य पूर्व जन्म के बड़े पापी थे जो ऐसे नारकी देश में जन्म लिये। वहाँ के रहन-सहन ही सब घृणित हैं। वहाँ जल का अभाव होने से सुना जाता है टुण्ड्रा के लोगों को जीवन भर स्नान करने का अवसर नहीं प्राप्त होता। वहाँ लोग चमड़ा पहनते हैं। वहाँ बच्चा पैदा होने पर मातायें बच्चों के अंगों को अपनी जिह्वा से चाट-चाट कर साफ करती हैं। तो क्या यहाँ की मातायें भी ऐसे करने लग जायँ ? या यहाँ के लोग भी जीवन भर स्नान न करें ? या अन्न, फल, मूलादि न खायँ ? या कपड़ा त्याग कर चमड़ा पहनें ? फिर वहाँ के अन्य रहन-सहन, आचरण-आहार की समता न लेकर केवल हिंसा-मांसाहार ही का अंग लेना कहाँ तक उचित है ? अर्थात सर्वथा अनुचित है। अतएव वहाँ (टुण्ड्रा) की परिस्थिति

को वहाँ ही रहने देना चाहिये । और यहाँ सब प्रकार सुविधा जनक पवित्र भारत-भूमि में रहकर पूर्ण अहिंसकी और शुद्ध शाकाहारी होना चाहिये ।

अवसर आ जाय तो प्राण त्याग देना चाहिये, परन्तु मद्य-मांस का आहार और हिंसा नहीं करने चाहिये । क्योंकि धर्म के अविचल बने रहने में शरीर की सफलता है, धर्म चले जाने पर जड़ शरीर रह कर क्या करेगा ? और फिर भी शरीर तो एक दिन नष्ट होगा ही ।

प्रश्न—हिंसा-मांसाहार से कोई बच ही नहीं सकता है, क्योंकि वनस्पति वृक्ष आदि काटना हिंसा तथा अन्न, फल, साग, मूलादि खाना मांसाहार सिद्ध हो जायगा, क्योंकि वृक्ष वनस्पतियों में जीवों का निवास है ।

उत्तर—अन्न-फल-मूलादि जहाँ तक अंकुरज वृक्ष वनस्पतियाँ हैं, ये निर्जीव पदार्थ हैं । इन सबों में चेतन जीव नहीं होते । चेतन जीव उन्हीं देहों में समझना चाहिये, जहाँ अन्तर-बाह्य ज्ञान हो, इच्छा युक्त क्रिया हो, हानि-लाभ समझ कर त्याग-ग्रहण एवं चलना-फिरना हो, अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थिति में सुख-दुःख मानना हो, कर्म-इन्द्रियाँ हों, ज्ञान इन्द्रियाँ हों, मन-वासना हों, जागृत-स्वप्न-सुषुप्ति, ये तीन अवस्थायें हों, भोजन, छाजन, मैथुन, भय, निद्रा और मोह ये छह पशुकर्म हों, निर्वाह के लिये क्रिया हो और अनुकूल-प्रतिकूल में राग-द्वेष हों । परन्तु उपरोक्त बातें मनुष्य, पशु, अंडज एवं उष्मज, इन चार खानि के देहों में ही वर्तते हैं । वृक्ष-वनस्पति आदि अंकुरज पदार्थों में नहीं ।

वृक्ष-वनस्पति अंकुरज में आँख, नाक, कान, जीभ, त्वचा, मुख, गुदा, हाथ, पैर आदि कोई भी इन्द्रिय न होने से, वे बाह्य-ज्ञान और क्रिया नहीं कर सकते, बाह्य ज्ञान-क्रिया नहीं होने से कोई वासना-संस्कार वृक्षों में नहीं टिकते, इसलिये वृक्षों में अन्तर ज्ञान या मन की सिद्धि नहीं होती । इस प्रकार इन्द्रिय-मन रहित वृक्षों में

जीवों का निवास मानना केवल भ्रम है। इन्द्रिय-मन से रहित होने के कारण ही अंकुरज में जागृत-स्वप्नादि तीनों अवस्थायें नहीं सिद्ध होती हैं।

वृक्षों में मुख कहाँ मानेंगे ? यदि जड़ में मानिये, तो जब कलम बाँधकर तथा काटकर पृथक डगाली लगा दी जाती है। तब वहीं से वृक्षों का पोषण होता रहता है। यदि जड़ ही को मुख माना जाय, तो जड़ से कलम बँधी डगाली तो पृथक हो गयी, फिर मुख पृथक हो जाने से वह कलम बँधी डगाली किस मुख से खाद्य खाती है ? इसलिये उसमें मुख आदि नहीं हैं। वृक्ष जड़ से और ऊपर डगाली-पत्ते आदि से तत्त्वों के परमाणु आकर्षण करते रहते हैं। उनके मुख्य कोई मुख नहीं होता।

मनुष्य, पशु आदि किसी देहधारी के अंग को काट डालिये, तो वे पृथक-पृथक सब कटे हुए अंग जीवित-सुरक्षित नहीं रह सकते और वे अंग बढ़कर न पूरे आकार-प्रकार युक्त ही हो सकते हैं। परन्तु वृक्षों से तो डालियों को काट-काट कर कितने ही स्थलों पर पृथ्वी में रोपकर सुरक्षित वृक्षाकार किये जा सकते हैं। यदि वृक्षों में जीव हैं, तो एक वृक्ष में रहा हुआ एक जीव किन-किन डालियों में चला गया ?

वृक्षों में भय आदि के कोई लक्षण नहीं दिखते। यदि वृक्ष पृथ्वी में गड़े होने से भाग नहीं सकते, तो किसी के काटने पर कम-से-कम थर्राना या शरीर हिलाना चाहिये। परन्तु उसमें जीव न होने से ये सब कोई क्रिया नहीं होती।

कंकड़-पत्थर के बढ़ने वत बीजी असर से और तत्त्वों में स्नेह, रसायन आदि शक्ति से वृक्ष-वनस्पति भी बढ़ते रहते हैं। वायु-प्रकाशादि युक्त अधिक जल तत्त्व से वृक्ष हरे-भरे रहते हैं। इसलिये अन्न, फल, मूल आदि जहाँ तक अंकुरज वृक्ष-वनस्पति आदि हैं उनमें चेतन जीव नहीं होते। अतएव अंकुरज पदार्थों का काटना न

तो हिंसा है और न उनको खाना मांसाहार है। केवल इतना ध्यान रखना चाहिये कि अंकुरज होते हुए भी मादक न हो और शुद्ध अमनिया करके और धो-पोछ कर खाया जाय।

प्रश्न—बड़े-बड़े ऋषि-मुनियों ने और आज-कल के विज्ञानी जगदीशचन्द्र वसु ने वृक्षों में जीव माना है, फिर कैसे न मान जाय?

उत्तर—निर्णय में बड़े-छोटे का प्रश्न नहीं है। आज के विज्ञानी हों या पूर्व के कोई हों। वृक्षों में जीवों की मान्यता चाहे जिसकी हो, कपोल कल्पित है। सो ऊपर संक्षिप्त निर्णय से समझना चाहिये१।

प्रश्न—अहिंसाव्रत पालन करने के विषय में और भी समझाने की कृपा कीजिये?

उत्तर—ऊपर जो समझाया गया है, उस पर ध्यान देना चाहिये और आगे भी सुनिये — सर्प, बिच्छू, जूँ, चीलर, खटमल (ढेकना) तथा चींटी आदि को भी जान-बूझकर भरसक नहीं मारना चाहिये। सर्प-बिच्छू को लोग काल समझ कर मार देते है; यह बड़ी भूल है। जो दूसरे को मारे वही काल है। फिर सर्प-बिच्छू को मारने वाले क्या काल नहीं हुए? बल्कि सर्प-बिच्छू के काटे-छेदे हुए मनुष्य बहुत से बच जाते हैं–नहीं मरते। परन्तु मनुष्य के मारे हुए सर्प-बिच्छू तो बेचारे तुरन्त ही मर जाते हैं। फिर हिंसकी मनुष्य तो कालों से महाकाल हो गया। अतएव मनुष्य को काल नहीं बनना चाहिये। यह भी नहीं सोचना चाहिये कि 'सर्प-बिच्छू को यदि देखकर भी नहीं मार देंगे, तो समय से हमें या हमारे कुटुम्बियों को काट खायेंगे।' घर, ग्राम तथा पृथ्वी पर बहुत सर्प-बिच्छू छिपे रूप से रहते हैं। फिर वे सबको क्यों नहीं काट खाते? जब तक जिनके बुरे प्रारब्ध (कर्म) के भोग

१–टि०—इसका विस्तार समझने के लिये सटीक दुखशमन चालीसा की १९ वीं चौपाई की व्याख्या देखनी चाहिये तथा अधिक विस्तार देखना हो तो भवयानसटीक का सातवाँ प्रकरण "जड़-चेतन निर्णय" देखना चाहिये।

नहीं उदय होते हैं, तब तक कोई भी सर्प-बिच्छू नहीं काट-छेद सकते। कितनी बार कई मनुष्यों के ऊपर से होकर पाँव के नीचे दबकर सर्प-बिच्छू चले जाते हैं, परन्तु नहीं काटते-छेदते। कितना भी खोज-खोज कर सर्प-बिच्छू को मार डालो; परन्तु अपने बुरे कर्मों के भोग जब उदय होंगे, तब कहीं से आकर सर्प-बिच्छू काट खायेंगे। मान लीजिये सर्प-बिच्छू न काटें-छेदें; परन्तु जब बुरे कर्म का भोग उदय होगा—क्षण ही में लकवा (फालिज) मार देगा, जीवन मिट्टी हो जायगा। कुष्ठ रोग पकड़ लेगा या और भी भयंकर व्याधियाँ एकाएक अचानक आ जायँगी जिससे मनुष्य तुरन्त बिल्कुल विवश हो जायगा। अधिक प्रारब्ध प्रकोप होने से दवाई-पानी एक भी न लगेगा। और असह वेदना सहकर प्राण त्यागना होगा। जो कर्म भोग है, भोगना अवश्य पड़ेगा। फिर इस न्याय से हिंसादि कर्मों से पाप की गठरी बाँध कर आज और आगे जन्मों में दुःखों का पात्र जीव बन जाता है। जो पहले जन्म में अच्छा-बुरा किया गया, वह आज भोगा जाता है और जो इस जन्म में अच्छा-बुरा किया जायगा, उसे कुछ अब और अधिक आगे जन्मों में भोगना पड़ेगा। कर्मों का रहस्य अत्यन्त गूढ़ है। इसे निर्विषयी, सूक्ष्मदर्शी विवेकी ही भलीभाँति समझते हैं। जब तक नर-जन्म में ज्ञान उदय नहीं होता, तब तक कर्म राशि का अन्त नहीं होता। इसके अतिरिक्त—

खटमल, जूँ, चीलर तथा चींटी आदि को भी शक्ति चले तक हिंसा से बचाना चाहिये। पहले तो खूब सफाई रखनी चाहिये, जिससे खटमल-जूँ आदिक न पड़ें। और यदि हो जावें, तो युक्ति पूर्वक उन्हें निकाल कर अलग करे। खटमल पड़ने पर चारपाई (खटिया) को ग्राम के बाहर थोड़ा धूप दिखला कर पेड़ के नीचे छाया में ले जाकर उसको ढीला करके या अधिक होने पर मचवा-सिरई उखाड़ कर झाड़ देना चाहिये। खटिया पर गर्म जल डालना या धूप में उसे पटक कर खटमल मारना तथा गड्ढे में चारपाई डालना—त्याग देना चाहिये।

इसमें हिंसा होती है। यह बचाया जा सकता है, शक्ति के बाहर नहीं है।

कपड़ा स्वच्छ रखना चाहिये, जिससे कपड़े में गन्दगी न हो, चीलर न पड़ें। यदि कदाचित चीलर पड़ जायँ, तो उन्हें निकाल कर जीते जी अलग फेंक देवें१। स्त्रियों के शिर में बड़े-बड़े बाल होते हैं, स्वच्छता न रखने से जूवें पड़ जाते हैं। उन्हें चाहिये प्रथम जल-मिट्टी एवं साबुन से धोकर स्वच्छ रखें। पुनः कदाचित जूवें पड़ जाने पर उन्हें हाथ से निकाल कर जीते जी कहीं रख देवें। स्त्रियों का धर्म है बायें हाथ से झाड़ू लेकर छोटी-छोटी चींटी या जीव जन्तुओं को धीरे-धीरे हटाते हुए चौका लीपें। चूल्हा झाड़ कर अग्नि जलावें। लकड़ी कण्डा (छेना) झाड़ कर जलाने के काम में लेवें। चावल दाल विचार कर जल छानकर भोजन बनावें। कोई काम के लिये जल गर्म करना हो तो छान लें। हर मनुष्य का कर्तव्य है मार्ग देखकर चले, यथाशक्ति बचाकर कोई काम करे। जिससे जान-बूझकर भरसक हिंसा न होने पावे। आजकल लोग भाँति-भाँति की विषैली दवाइयों को छिड़क कर निरपराध मच्छड़, मक्खियों, चूहा और छिपकली आदि को मारते हैं। परन्तु न तो मच्छड़ और मक्खी आदि की संख्या कम होती है और न तो रोगी ही कम होते हैं, मक्खीमारों का सारा प्रयत्न केवल पाप की गठरी बाँधने के लिये ही होता है। जो लोग हिंसा करने का कानून बनाते हैं, वे पाप के भागी होते हैं।

रोग दो प्रकार के होते हैं—एक पूर्व जन्मों के पापों से दूसरा अब के असंयम से। इन दोनों का प्रायः पहले स्पष्ट निर्णय नहीं

१—यहाँ लोग प्रश्न करते हैं कि यदि जूवाँ, खटमल आदि को निकाल कर अलग कर दिया गया, तो भी तो हिंसा हुई ? इसका उत्तर यह है कि मार डालने की अपेक्षा जीते जी अलग कर देना तो अच्छा ही है। फिर भी उनका आहार मैला-कचड़ा है, वे कहीं भी प्रारब्धानुसार खाते-जीते रहेंगे। शक्ति चले तक हिंसा बचाना चाहिये। शक्ति के बाहर क्या किया जायगा ?

किया जा सकता कि कौन रोग पूर्व का पापकृत है और कौन रोग आज के असंयम से है। उचित औषध-संयम से जो रोग नाश हो जाय, उसे आज के असंयम से जानना चाहिये। और जो रोग औषध-संयम से थोड़ा ही शान्त होते दीखे या बल्कि औषध-संयम करते हुए रोग बढ़ता ही दीखे, तो उसको पूर्व के पापकृत समझना चाहिये। इसलिये जो रोग असंयम से हो गया होगा; वह सात्विकी अहिंसकी औषध और संयम से निवृत्त हो जायगा। और जो रोग पूर्व जन्मों का पापकृत होगा, वह बिना भोगे मिट नहीं सकता। फिर ऐसी अवस्था में रोग निवृत्ति के लिये हिंसा-मांसाहार करना बिल्कुल भूल है। बल्कि पाप की गठरी बाँध कर आगे जन्मों में अधिक रोगी-दोषी एवं दुखी होने का बीज बोना है। विचारवान अहिंसकी मनुष्यों को तो इतना दृढ़ निश्चय रहता है कि असह दुःख भले भोगना पड़े, प्राण भले चले जायँ; परन्तु किसी भी हेतु से जान-बूझकर भरसक किन्हीं छोटे-बड़े देहधारी जीवों की हिंसा नहीं करूँगा और मांस नहीं खाऊँगा।

प्रश्न—गृहस्थाश्रम में अहिंसा-व्रत का पालन कैसे करे ?

उत्तर—गृहस्थ लोग गृहस्थी करना छोड़ देवें, तो बन नहीं सकता। जो जितना उचित कर्तव्य है, उसको उन्हें करना ही चाहिये। अब रहा उनके लिये बचाव का मार्ग यह है कि अहिंसाव्रत पालन करने का मन में पूर्ण निश्चय रखें। दया भाव पूरा हृदय में बनाये रखें। जान-बूझकर जहाँ तक शक्ति चले, तहाँ तक कोई भी काम करते समय जीवों की हिंसा बचावें। जो अन्जान में या शक्ति न चलने पर हिंसा हो जाती है, उसके लिये कुछ नहीं कहा जा सकता। वास्तव में अपने मन में हिंसा की भावना न होने से उसका पाप भी नहीं लगेगा। परन्तु जो जान-बूझकर शक्ति चले तक हिंसा नहीं बचायेगा या आलस्य-प्रमाद-असावधानी से हिंसा की परवाह नहीं करेगा तथा जीवों की हिंसा होते देखकर अनुमोदन (प्रसन्नता-

प्रकट) करेगा; उसको हिंसा का पाप अवश्य लगेगा। अतएव मन में पूर्ण दया धारण कर शक्ति चले तक जीव-हिंसा बचानी चाहिये। यों तो गृहस्थाश्रम एक खटपट और कालिमा का घर है। अतः गृहस्थों के लिये इसीलिये महापुरुषों ने विधान बनाया है कि वे लोग खेती-नौकरी-व्यापार द्वारा कमाये हुये धन का दसवाँ भाग धर्म में लगावें। वर्तमान समय में ऐसे लोग बहुत ही कम होंगे कि अपनी कमाई का दसवाँ भाग धर्म में खर्च करते हों। धर्म-हीन होने से ही आज-कल मनुष्य अधिक दुखी हैं। यद्यपि वर्तमान में भी कुछ लोग ऐसे हैं कि अपने और आश्रयी जनों के मुख्य निर्वाह के लिये रखकर बाकी सब-के-सब कमाई का फल धर्म में लगा देते हैं। परन्तु ऐसे बहुत कम हैं। अतः दयापूर्वक शक्ति भर छोटे-बड़े सभी जीवों के प्रति अहिंसा व्रत पालन करना चाहिये और अन्तः-करण की शुद्धि के लिये धर्म परोपकार करना चाहिये।

बैल, गाय, भैंस तथा अन्य जानवरों को उतना ही रखना चाहिये, जिनकी भलीभाँति सेवा कर लेवे। यदि बहुत से गाय, भैंस, बैल, घोड़ा आदि रखकर उनकी उचित सेवा-रक्षा नहीं कर पाते, तो पाप पड़ता है। भक्त-सज्जनों को भेड़-बकरियाँ नहीं रखना चाहिये, क्योंकि उन्हें पालकर अन्त में चिकवा (बधिक) के हाथ में लोग बेंचते हैं। या जो पाले तो किसी के हाथ बेंचे नहीं। भेड़-बकरियाँ बुढ़ाकर अपने मृत्यु से जब तक न मर जायँ, तब तक उनकी पूर्ण सेवा करे। ऐसे गाय, बैल, भैंस आदि की भी उनकी मृत्यु तक भलीभाँति सेवा करनी चाहिये। बुड्ढे होने पर न निरादर करना चाहिये और कसाई के हाथ में सज्जन बेंचेंगे ही कैसे ? इसलिए उसके विषय में समाधान करने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। गर्मी में ताप से, वर्षात में पानी और मच्छड़ से तथा शीतकाल में ठण्ढक से अपने पशुओं की भलीभाँति रक्षा करनी चाहिये और पेट भर चारा खिलाना चाहिये। गाड़ी, हल तथा कोल्हू आदि में जोखड़ कर इतना अधिक बोझ नहीं लादना चाहिये या इतना अधिक काम नहीं

लेना चाहिये जिससे पशुओं को अधिक कष्ट हो। उचित मात्रा में पशुओं से काम लेना चाहिये। पैना (छड़ी) में लोह की अरई (काँटी) लगवा कर हल (नागर) जोतते या गाड़ी हाँकते समय बैल-भैंसा आदि के अंगो में नहीं धँसाना चाहिये और न डण्डे से ही अधिक मारना चाहिये। जो खेत जोतते समय या गाड़ी, कोल्हू आदि हाँकते समय बैल-भैंसों को अधिक मारते या कोंचते हैं, वे पाप के भागी होंगे। अतः इशारे से बैलों को हाँकना चाहिये।

तित्तिर नहीं जिलाना चाहिये, क्योंकि यह महान हिंसकी होता है। तोता-मैना भी नहीं जिलाना चाहिये, क्योंकि पिंजड़े रूप कारावास में अनावश्यक निरपराध प्राणी को बन्द करने से मनुष्य पाप का भागी होता है। चींटा, दीमक आदि के घर में निकलने से उनके ऊपर गर्म राख नहीं छोड़ना चाहिये। यह महान पातक है।

खेत कमाने, घर बनाने, बाग लगाने, भोजन बनाने, चौका या झाड़ू लगाने तथा मार्ग चलने आदि निर्वाहिक या पारमार्थिक कार्यों के स्थान पर यथाशक्ति जीवहिंसा बचाकर कार्य करना चाहिये और मनःकल्पित कार्यों में जैसे तित्तिर जिलाना, तोता-मैना जिलाना, बुलबुल पकड़ना आदि सर्वथा त्याग देना चाहिये। फसल काटने या फल तोड़ने के समय कुछ अन्न-फल आदि छोटे-छोटे जीव-जन्तुवों के खाने के लिये छोड़ देना चाहिये। अपनी कमाई से दीन-दुखियों की सहायता-रक्षा करते रहना चाहिये। और दया-धर्म धारण करके सदैव परोपकार और सन्त-सेवादि करते रहना चाहिये। इस प्रकार सज्जन अहिंसा व्रत पालन कर अपना सुधार कर सकते हैं।

दोहा—हिंसा चोरी मुखबिरी, झूठ बिरानी नारि।
जो चाहे कल्याण को, इतनी बात निकारि॥

हिंसा-मांसाहार-निषेध-कहरा

त्यागो हिंसा मांस भाई दुख दायी करनी॥ टेक॥
हस्ती से कीड़े तक जितने जीव जन्तु दिखलाई।
शक्ति चले तक तिन्हें बचावो देव न दुःख कराई॥

तबहीं तुमहूँ सुख पाई ॥ दुख दाई० ॥ १ ॥
रज बीरज से मांस बना है मल मूत्रहिं लपटाई।
अति दुर्गन्ध अपावन देखो दूर से रहा बसाई ॥
भलो मानुष कैसे खाई ॥ दुख दाई० ॥ २ ॥
सिंह स्यार भेड़हा बिलार बकुला कूकर जो भाई।
मांस अहार इन पशु पक्षी का तामस क्रूर कसाई ॥
चील्हौ गीधौ के खवाई ॥ दुख दाई० ॥ ३ ॥
जीव बधन जो आज्ञा देवे दूजे बधै जो लाई।
तीजे जो खरीद घर लावे चौथे बेचै भाई ॥
पँचये काटि बनावे धोवे छठये जौन पकाई।
सतयें मांस जो पारुष करई अठये जौन चबाई ॥
हिंसा का फल इन आठों को लागै पाप अघाई।
धर्म शास्त्र में ऋषि मुनि आदिक ऐसो कहा बुझाई ॥
ताते आठों ये कसाई ॥ दुख दाई० ॥ ४ ॥
जीव बधै औ मांस भखै जो तामस पन बढ़ि जाई।
दया विचार शील सत श्रद्धा मानुष गुण नशिजाई ॥
मानव दानव है दिखाई ॥ दुख दाई० ॥ ५ ॥
मांस आहार में रोग अधिक है वैद्य डाक्टर गाई।
जाहि पशू के मांस खाय ता पशु के रोग उगाई ॥
लोको परलोको नशाई ॥ दुख दाई० ॥ ६ ॥
अन्न दूध फल साग मूल मानुष का भोजन गाई।
तजो मांस अण्डा मछली हिंसा पिशाच पन भाई ॥
सुन्दर तन धर नाहिं लजाई ॥ दुख दाई० ॥ ७ ॥
घर में मुर्दा मरै जो कोई ता दिन अन्न न खाई।
बाहर से यक मुरदा लावें ताको खायँ पकाई ॥
देखो दुनिया कै बौराई ॥ दुख दाई० ॥ ८ ॥

जीव कै बदला जीव चढ़ावें अपने लरिकन ताई।
यही पाप से अन्य जन्म में लरिके जिये न भाई॥
झूठे माने देवी दाई ॥ दुख दाई० ॥ ९ ॥
जीव बधे का बदला तुमका देवैक परी अघाई।
बकरा मुरगा का तन पइहौ काटै तुम्हें कसाई॥
यामें जानों झूठ न राई ॥ दुख दाई० ॥ १० ॥
अपनी जान समान सभी को जानो प्यारे भाई।
दया मेहर अभिलाष धरो दिल याही मानवताई॥
नहिं तो नर-पिशाच हौ भाई ॥ दुख दाई० ॥ ११ ॥

एक मनोवैज्ञानिक ने लिखा है कि छोटा मस्तिष्क जो बड़े मस्तिष्क के नीचे अर्थात शिर के पीछे भाग में रहता है। शराब पीने या नशा के सेवन से वह छोटा मस्तिष्क ठीक रीति से कार्य नहीं कर पाता है। यही कारण है कि नशे में मनुष्य ठीक बोल तथा चल नहीं पाता।

स्नायु-मंडल पर शराब का प्रभाव।

शराब और अन्य मादक-द्रव्यों का स्नायु-मंडल पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार के नशीले पदार्थ थोड़ी देर के लिये कोषों को बढ़ाकर इनमें चेतना उत्पन्न कर देते हैं, परन्तु अन्त में वे सजीव कोषों को मार डालते हैं। मादक-द्रव्यों के उपयोग से स्नायुओं के कार्य में बाधा होती है।

(शरीर-विज्ञान)

तम्बाकू के दुष्परिणाम।

प्रत्येक प्रकार की तम्बाकू में निकोटिन नामक एक उत्तेजक जहरीला पदार्थ रहता है। इसके उपयोग से भी स्नायु शिथिल हो जाते हैं। और इससे क्षय रोग, केन्सर आदि बीमारियाँ हो जाती हैं। इसीलिये बीड़ी सिगरेट या अन्य किसी रूप में तम्बाकू पीना हानिकारक होता है।

(शरीर विज्ञान)

अतः शराब, गाँजा, भाँग, तम्बाकू, बीड़ी, सिगरेटादि व्यसनों का त्याग करना परम आवश्यक है।

मांसाहार के समान ही मदिरा पीना महान पाप जनक और बुद्धि नाशक है। अतः निम्न भजन को मनन कर मदिरा त्यागना चाहिये।

मद्यपान-निषेध--कहरा

त्यागो मदिरा के पियाई मानो भाई बतिया ॥ टेक ॥
मदिरा पिये बुद्धि सब नाशै धन के होय सफाई।
आदत पड़ै चैन नहिं आवै चिन्ता रही जलाई ॥
चोरी कइकै मदिरा लाई ॥ मानो भाई० ॥ १ ॥
पहिला प्याला के पीते ही तोता अस तुतराई।
दुसरे प्याला के पीते खन घोड़ा अस हिंहियाई ॥
झूमैं हाथी सो सुँसुआई ॥ मानो भाई० ॥ २ ॥
चौथे प्याला के पीते ही गदहा अस होइ जाई।
जहाँ तहाँ नाली कचड़ा में लोटै लाज बिहाई ॥
कूदै एक-एक पर धाई ॥ मानो भाई० ॥ ३ ॥
निशिदिन करै कुसंग को सेवन सब दुर्गुण उपजाई।
चोरी जारी करै लबरई ताड़ी पीट हहाई ॥
तन कै लाज शर्म बिसराई ॥ मानो भाई० ॥ ४ ॥
मदिरा पीना महा पाप है वेद सन्त कहैं भाई।
याते मदिरा पीना त्यागो कह अभिलाष बुझाई ॥
यहि में तुम्हरो है भलाई ॥ मानो भाई० ॥ ५ ॥

गाँजा, भाँग, बीड़ी, सिगरेट, चर्स, चण्डू, तमाकू, दोहरा तथा सुर्ती आदि नशीली वस्तु सब प्रकार हानिकर जानकर और नीचे का भजन मनन करके त्याग देना चाहिये।

अमल-निषेध-कहरा

दीजै अमल हटाई मेरे भाई अमली ॥ टेक ॥
गाँजा चरस बड़ा दुख दाई खाँसी दमा बुलाई।

तन का रक्त भस्म कै डारै खर्चा बढ़ै सवाई ॥
नशा बुद्धी को नशाई ॥ मेरे भाई० ॥ १ ॥
बीड़ी औ सिगरेट इसी गाँजा का लहुरा भाई ।
विद्या बुद्धि धर्म धन बल से होवे हाथ सफाई ॥
तेहि पर बाबू को सुहाई ॥ मेरे भाई० ॥ २ ॥
कोई कच्ची सुर्ती खावै झोरे भीख मँगाई ।
बीच सभा में करै थुकाई मुहवो लगै बसाई ॥
सूर्ती झूठो देय बुलाई ॥ मेरे भाई० ॥ ३ ॥
देखा देखी घर कुटुम्ब के सब असली होइ जाई ।
सद्गुण घटै दोष तन बाढ़ै चोरिउ रारि कराई ॥
त्यागो त्यागो दुख दायी ॥ मेरे भाई० ॥ ४ ॥
भाँग पिये से बुद्धि भ्रष्ट है ज्ञान ध्यान नशि जाई ।
दोहरा पान असल सब दुखदा चिन्ता खर्च बढ़ाई ॥
आदत बारम्बार सताई ॥ मेरे भाई० ॥ ५ ॥
याते सर्व असल को त्यागो तन-मन शुचि होइ जाई ।
व्यर्थ हर्ज खर्चा से छूटै चित परसन्न रहाई ॥
सुखमय जीवन अपन बिताई ॥ मेरे भाई० ॥ ६ ॥
जो धन होय धर्म में खर्चो पर उपकार कमाई ।
भक्ति धरम करि सुयश कमाओ यह अभिलाष हिताई ॥
याते असल बिहाई ॥ मेरे भाई असली ॥ ७ ॥

दोहा—मांस भखै मदिरा पीवै, धन वेश्या सों खाय ।
जुआ खेल चोरी करै, अन्त समूला जाय ॥
मांस मांस सब एक है, मुरगी हिरनी गाय ।
आँख देखि नर खात हैं, ते नर नरकहिं जाय ॥
कलियुग काल पठाइया, भांग तमाकू फीम ।
ज्ञान ध्यान की सुधि नहीं, बसै इन्हीं के सीम ॥
भाँग तमाकू धतुरा, आफू और शराब ।
कौन करेगा बन्दगी, ये तो भये खराब ॥

सद्गुरवे नमः

अहिंसा शुद्धाहार

उत्तरार्ध

[बीजक-शिक्षा संक्षिप्त-संग्रह से]

३४—(शब्द—१०)

सन्तो राह दुनों हम दीठा ॥१॥

हिन्दू तुरुक हटा नहिं माने। स्वाद सबन को मीठा ॥२॥
हिन्दू बरत एकादशि साधे। दूध सिंघारा सेती ॥३॥
अक्ष को त्यागे मन को न हटके। पारन करे सगौती ॥४॥
तुरुक रोजा-निमाज गुजारे। बिसमिल बांग पुकारे ॥५॥
इनको बिहिस्त कहाँ से होवे। जो साँझै मुरगी मारे ॥६॥
हिन्दू की दया मेहर तुरकन की। दोनों घटसे त्यागी ॥७॥
ई हलाल वे झटका मारें। आग दुनों घर लागी ॥८॥
हिन्दू तुरुक की एक राह है। सतगुरु सोई लखाई ॥९॥
कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो। राम न कहूँ खुदाई ॥१०॥

ऐ सन्तो ! मैंने हिन्दू और मुसलमान इन दोनों का मार्ग देख लिया है ॥ १ ॥ हिन्दू और मुसलमान किसी विचारवान का कहा नहीं मानते, इन सबको जीभ का स्वाद ही मीठा लगता है ॥ २ ॥ दूध और सिंघारा

खाकर हिन्दू लोग एकादशी व्रत रहते हैं ॥ ३ ॥ वे अन्न को तो त्यागते हैं, परन्तु मन को अपने वश नहीं करते और द्वादशी को सामिष भोजन का पारण१ करते हैं ॥ ४ ॥ मुसलमान लोग ३० रोजा रहते हैं और पाँच वक्त निमाज गुजारते हैं। "बिस्मिल्लाहिर्रहिमानिर्रहीम" इत्यादि कहकर अजान देते हैं ॥ ५ ॥ परन्तु इनको बिहिश्त कैसे होगा, जब सायंकाल को ही मुर्गी मारते हैं ॥ ६ ॥ हिन्दू और मुसलमान दोनों ने अपने-अपने अन्तःकरण से दया और मेहरबानी त्याग दिया है ॥७॥ वे मुसलमान लोग प्राणियों को छूरी से हलाल करते हैं और हिन्दू लोग झटका मारते हैं। इस प्रकार दोनों के मन में निर्दयता और गैर मेहरबानी की आग लगी है ॥ ८ ॥ हिन्दू और मुसलमान दोनों का एक मार्ग है, ब्रह्माजी और मुहम्मद साहेब ने यही कल्पित मार्ग लखाया है ॥९॥ सद्गुरु श्रीकबीरसाहेब कहते हैं—हे सन्तो! सुनो, अपने चेतन पारख स्वरूप से पृथक न कहीं राम है और न कहीं खुदा है तू ही राम है। खुदी ही खुदा है ॥१०॥

व्याख्या—जिन्हें विवेक-विचार नहीं है, ऐसे हिंसकी-मांसाहारी क्या हिन्दू क्या मुसलमान, वे सज्जन सन्तों की शिक्षा को नहीं मानते। मांसाहार का निषेध सुनकर वे दुखी हो जाते हैं। इस जीभ के स्वाद ने मनुष्य को राक्षस बना दिया है। जो मांस महा अपावन और घृणित है, उसी में लोगों ने पवित्र भावना और स्वाद माना है। मांसाहार मद्यपानादि लोग नहीं त्यागते और एकादशी व्रत साधते हैं। फिर इससे क्या फल होता है? जीव हिंसा ही महान पाप है। और मांस भक्षण ही राक्षसी-भोजन है। फिर इनको करते रहने से मनुष्य घोर नर्क से कैसे छूट सकता है?

मुसलमान भाई रोजा रहते और नमाज गुजारते हैं, बिस्मिल्ला

१—हिन्दुस्तान के हर प्रदेशों में ऐसी बात नहीं है। किसी-किसी प्रदेश में ही यह अज्ञानता है।

का नाम लेते हैं। परन्तु सायंकाल को मुर्गी-बकरी या भेड़ा-गाय-भैंस आदि मार कर खाते हैं और यह निर्दयता का कार्य करना ही बिहिश्त का साधन मानते हैं। परन्तु इस कर्म से कल्याण तो किसीप्रकार भी नहीं हो सकता, सिवा अकल्याण के।

मांसाहारी हिन्दुओं ने हृदय से दया को खदेड़ दिया और भैंसा, बकरी, मुर्गी, अण्डे, मछली आदि मारकर खाने लगे। ये लोग तीव्र शस्त्र लेकर पशुओं को एकही बारमें मार देते हैं और खा जाते हैं। मुसलमान लोग तो जीवों की हिंसा करना और मांस खाना भूलवश इस्लाम का धर्म ही माने हैं। मुसलमान लोग छूरी लेकर पशुओं के गला पर रगड़ कर मारते हैं। इन भूले लोगों को अपने समान दूसरे का दुःख नहीं प्रतीत होता है। अपने पैर में काँटा गड़ जाय तो शरीर भर हिल जाता है, अत्यन्त विकल हो जाते हैं। परन्तु हाय! इन भूले लोगों को दूसरे के दुःखों का तनिक भी ध्यान नहीं रहता। हिंसा-मांसाहारी हिन्दू और मुसलमान—दोनों के मन में निर्दयता रूपी पापाग्नि लगी है। हिंसकी और मांसाहारी लोगों की आज-कल वृद्धि हो रही है।

मांसाहारी हिन्दू लोग सोचते हैं कि राम-नाम के जप से या तीर्थ-भ्रमण, देव-पूजन आदि से हिंसा-मांसाहार का पाप कट जायगा और मुसलमान लोग समझते हैं कि रोजा-नमाज आदि करने से हमारा पाप कट जायगा। परन्तु यह हिन्दू और मुसलमान दोनों का भ्रम है। राम शब्द के जप से या जड़-तीर्थ-भ्रमण, जड़-देवादि के पूजने से तथा कल्पित रोजा-नमाज करनेसे जीव की हिंसा का पाप नहीं छूट सकता है। साहेब ने साखी में कहा है—

साखी—जीव घात ना कीजिये, बहुरि लेत वे कान।
तीरथ गये न बाँचिहो, जो कोटि हिरा देव दान॥

देखो! पाप कर्मों से बचाने वाला तुम से पृथक राम-खुदा कोई नहीं है। तुम जैसा करोगे वैसा भरोगे। तुम कर्म करने में स्वतन्त्र हो और कर्मों के फल भोगने में उन्हीं कर्मों के आधीन हो।

आज चाहो तो सब पापकर्मों को छोड़कर अपना सुधार कर सकते हो।

शिक्षासार—हिंसा-मांसाहार का सर्वथा त्याग कर देना चाहिये।

४३—(शब्द —११)

सन्तो पाँड़े निपुण कसाई ॥१॥
बकरा मारि भैंसा पर धावैं। दिल में दर्द न आई ॥२॥
करि स्नान तिलक दै बैठे। विधि सों देवि पुजाई ॥३॥
आतमराम पलक में विनशे। रुधिर की नदी बहाई ॥४॥
अति पुनीत ऊँचे कुल कहिये। सभा माहिं अधिकाई ॥५॥
इन्हते दीक्षा सब कोइ माँगे। हँसी आवै मोहिं भाई ॥६॥
पाप कटन को कथा सुनावैं। कर्म करावैं नीचा ॥७॥
हम तो दूनों परस्पर देखा। यम लाये हैं धोखा ॥८॥
गाय बधे ते तूरुक कहिये। इनते वै क्या छोटे ॥९॥
कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो। कलिमा ब्राह्मण खोटे ॥१०॥

हे सन्तो ! हिंसकी मांसाहारी ब्राह्मण लोग चतुर बधिक हैं ॥ १ ॥ ये बकरा को मारकर दशहरे में भैंसा पर भी धावा बोल देते हैं। इनके मन में दया-दर्द नहीं लगती ॥ २ ॥ स्नान करके और तिलक-छाप लगाकर मन्दिरों में बड़े ठाट से बैठते हैं। और विधिपूर्वक कल्पित चण्डी-दुर्गा कालिका आदि की पूजा करते-कराते हैं ॥ ३ ॥ परन्तु भैंसा-बकरा रूप आतमराम को क्षणमात्र ही में काट कर रक्त की नाली बहाने लगते हैं ॥ ४ ॥ इन ब्राह्मणों को संसारी लोग अत्यन्त पवित्र और उच्च कुल के मानते हैं। सभा में लोग इनकी प्रतिष्ठा करते हैं ॥ ५ ॥ और इन्हीं से सब लोग शिक्षा-दीक्षा या मन्त्र भी माँगते हैं। यह चरित्र देखकर हमें तो भाई ! हँसी आती है ॥ ६ ॥ जीवों के

पाप कटने के लिये तो ये लोग कथा सुनाते हैं। परन्तु लोगों से हिंसादि नीच-कर्म करवाते हैं ॥ ७ ॥ एक ओर कथा सुनाना, दूसरी ओर हिंसा करना-करवाना यह परस्पर विरोधी बातें देखकर मुझे यही निश्चय होता है कि ये हिंसकी मांसाहारी ब्राह्मण लोग पूरे यमराज हैं और जीवों को धोखा देकर बाँध रहे हैं ॥ ८ ॥ गाय मारने से मुसलमान लोग तुरुक कहे जाते हैं। तो क्या इन तुर्कों से वे हिंसकी-मांसाहारी ब्राह्मण कम हैं ? गुरु-गुरु कहो ! वे तो पूरे तुर्किया ब्राह्मण हैं ॥ ९ ॥ सद्गुरु श्री कबीर साहेब कहते हैं कि हिंसा-मांसाहार रूप (कालिमा) पाप को धारण करने वाले ब्राह्मण बड़े बुरे हैं ॥ १० ॥

व्याख्या—'सन्तो पाँड़े निपुण कसाई।' इस शब्द को पढ़-सुनकर किसी भी ब्राह्मण भाई को दुखी नहीं होना चाहिये। क्योंकि यहाँ ग्रन्थकर्ता ने सब ब्राह्मणों को कसाई नहीं कहा है। बल्कि जो हिंसा करता है और मांस खाता है, उसी को यहाँ साहेब ने कसाई कहा है। सो तो उचित ही है। क्योंकि जीव वध करने वाला ही कसाई माना जाता है। श्री कबीर साहेब ने यथार्थ पण्डितों का बड़ा आदर किया है। आप ने कहा है—

"पण्डित सो बोलिये हितकारी।"

जिसे अपना जाना जाता है, उसके दोषों को देखकर अपने मनमें दुःख होता है और उसके दोष-निवृत्ति के लिये गर्म-नर्म किन्हीं वचनों में डाट-फटकार या समझा-बुझा कर उसे अच्छे मार्ग पर लाने का प्रयत्न किया जाता है। यहाँ पर सन्त श्री कबीरसाहेब ने अपना स्वजाति मानव-बन्धु जानकर ब्राह्मणों पर कृपा दृष्टि करके उनके पाप-निवृत्ति के लिये उन्हें उनका दोष दिखलाया है। हिंसा-मांसाहार करने वाले ब्राह्मण भाइयों को चाहिये कि वे पिपासु के जल पाने न्याय प्रसन्न चित से इन वचनों को पढ़-सुन और मनन करके हिंसा-मांसाहार को बिल्कुल छोड़ देवें।

इस शब्द में हिंसकी ब्राह्मणों को साहेब ने चतुर कसाई कहा है। चतुर कसाई इसलिये कहा है कि ये हिंसकी पण्डित लोग देवी के स्थान पर या दशहरे में जीव वध करना मङ्गल कार्य या धर्म समझते हैं। एक ओर हिंसा रूप घोर पाप करते हैं और दूसरी ओर पाप से बचने का स्वाङ्ग बनाकर कल्याण रूप बनते हैं। इसलिये ये चतुर कसाई हैं।

जो बकरा या भैंसा मारता है, जो मांस खाता है। वह किसी भी ब्राह्मण-कर्म में सम्मिलित होने योग्य नहीं है। मांसाहारी ब्राह्मण नहीं माना जा सकता। हिंसा-मांसाहार करने से ही विद्वान ब्राह्मण रावण राक्षस कहा गया। बहुत से ब्राह्मण जातीय पण्डित लोग होते हैं, वे मांस खाते हैं और हिंसा करते हैं, परन्तु व्यासगद्दी पर बैठकर श्रीमद्भागवत की कथा कहते वे लज्जित नहीं होते। एक सज्जन पण्डित ने इन पंक्तियों के लेखक से कहा—"हमारे बहुत से पण्डित भाई हैं। जो श्री मद्भागवत, सत्यनारायणव्रत और बाल्मिकि-रामायण आदि की कथा व्यासगद्दी पर बैठकर श्रोताओं को सुनाते हैं। परन्तु स्वयं मांस खाते हैं और साथ-साथ शराब भी पीते हैं। क्योंकि शराब मांस का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। प्रायः जहाँ मांस-भक्षण है वहाँ शराब-पान और जहाँ शराब-पान है वहाँ मांस-भक्षण होता है।"

दृष्टान्त—एक पण्डित जी श्रीमद्भागवत कथा के वाचक थे। परन्तु पक्के मांसाहारी भी थे। एक बार ग्राम ही में भागवत की कथा पण्डितजी कह रहे थे। दोपहर के पश्चात स्नानादि क्रिया करके पण्डित जी कथा बाचने व्यासगद्दी पर जाने लगे, तो पण्डिताइन से कहा—घड़े के जल में जो मछलियाँ जिलाई हैं, उन्हें मारकाट कर गर्म मसाला छोड़कर भली प्रकार स्वादिष्ट बनाना। ऐसा कह कर चल दिये। पण्डिताइन ने सोचा आज-कल पण्डित जी ग्राम ही में कथा कह रहे हैं, चलें आज भला कथा तो सुन आवें। अतः पण्डिताइन भी जाकर कथा सुनने लगीं। संयोगाधीन हिंसा-मांसाहार के खण्डन का भी प्रकरण कथा में आया और विधि पूर्वक पण्डित जी ने

हिंसा-मांसाहार का खण्डन किया। इन सब बातों को सुनकर पण्डिताइन को अपने दोनों प्राणी के हिंसा-मांसाहार युक्त दुष्चरित्र पर बड़ा शोक हुआ और तुरन्त घर आकर घड़े के जल में खाने के लिये जो मछलियाँ जिलाई थीं, उन्हें गड्ढे के जल में छोड़ आयीं तथा शुद्ध अन्न का भोजन बना रखीं। पण्डित जी जब चौके पर भोजन करने बैठे, तब थाली में मछलियों का मांस न देखकर बड़े क्रुद्ध हुए और बोले—तेरे से जो मैं कहकर दिन में गया था, क्या तू भूल गयी? क्या तू नहीं जानती कि बिना मांस के मुझे भोजन अच्छा नहीं लगता? पण्डिताइन ने कहा—अहो! आप अभी-अभी व्यास-गद्दी पर बैठकर हिंसा-मांसाहार का जोरों से सयुक्ति खण्डन कर आये हैं और तुरन्त भूल गये? पण्डित ने कहा—बेहूदी! कहीं चौकी की बात चौका पर लाया जाता है? चौकी अर्थात व्यासगद्दी पर बैठकर हिंसा-मांसाहार का खण्डन करना ही योग्य है। परन्तु यहाँ चौका में हिंसा-मांसाहार करने से क्या दोष है? भगवान के राज्य में सब कुछ सम्भव है।

बतलाइये! जब ऐसे-ऐसे अमानुष लोग ही धर्म सुधारक गुरु, कथा-वाचक और पुनीत माने जाते हैं। तब जगत का पतन क्यों न हो? ऐसे हिंसकी मांसाहारी लोगों को गुरु बनाना केवल अज्ञानता है। जो लोग जीव-वध करना धर्म मानते हैं, वे यमराज हैं। वे मनुष्यों को भ्रमाने वाले उनके और अपने काल बने हैं। गाय मारने वाले मुसलमानों से भैंसा, बकरा, मछली मारने वाले ब्राह्मण या हिन्दू कम कसाई नहीं हैं। जो ही मनुष्य जान-बूझ कर एवं शक्ति चले तक दूसरे की जान को मारेगा वही कसाई कहा जायगा। यह न्याय है।

किसी भाई को कबीर साहेब की कटु आलोचना पढ़-सुनकर कष्ट नहीं मानना चाहिये। क्योंकि यदि फोड़े का आपरेशन करते समय डाक्टर दयावश कम चीरे और फोड़े को कम दबावे, तो फोड़ा न

अच्छा होकर कष्ट अधिक बढ़ता है। इसलिये डाक्टर का धर्म है कि वह उचित गहराई से आपरेशन करके फोड़े को खूब दबाकर विकारी रक्त और मवाद को निकाल दे। यह डाक्टर की दया ही है। इसी प्रकार सन्त श्रीकबीरदेव ने मनुष्यों के ऊपर कृपा करके ही हिंसा-मांसाहार रूप पाप-कर्म छुड़ाने के लिये यह कटु आलोचना की है। गोस्वामी जी ने कहा है—

जिमि शिशु तन व्रन होई गोसाईं। मातु चिराव कठिन की नाईं॥

दोहा— यदपि प्रथम दुख पावइ, रोवत बाल अधीर।
व्याधि नाश हित जननी, गनति न सो शिशु पीर॥

दोहा — सचिव वैद्य गुरु तीन ये, प्रिय बोलैं भय आश।
राज देह अरु धर्म का, होय वेगि ही नाश॥

अतएव हिंसा-मांसाहार-निषेध के विषय में जो यहाँ तक कहा गया है और आगे कहा जायगा-सज्जनों को चाहिये कि उसको गुणग्राह्य लक्ष्य से मनन करें।

शिक्षासार—ऐ प्रिय बन्धुओ! हिंसा-मांसाहार बिल्कुल छोड़ दो।

४४—(शब्द—४६)

पण्डित एक अचरज बड़ होई॥ १॥
एक मरि मुये अन्न नहिं खाई। एक मरे सिझै रसोई॥ २॥
करि अस्नान देवन की पूजा। नौ गुण काँध जनेऊ॥ ३॥
हँड़िया हाड़ हाड़ थरिया मुख। अब षट कर्म बनेऊ॥ ४॥
धर्म करे जहाँ जीव बधतु हैं। अकर्म करे मोरे भाई॥ ५॥
जो तोहरा को ब्राह्मण कहिये। तो काको कहिये कसाई॥ ६॥
कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो। भरम भूलि दुनियाई॥ ७॥
अपरम्पार पार पुरुषोत्तम। या गति बिरले पाई॥ ८॥

ऐ मांसाहारी पण्डितो ! एक बात का बड़ा आश्चर्य होता है ॥ १ ॥ वह यह है कि घर में जब कोई कुटुम्बी मर जाता है, तब शोक या अशौच मानकर उस दिन घर के लोग अन्न नहीं खाते हैं । और एक भैंसा, बकरा, मछली आदि जीव को बाहर से मार कर लाते हैं, तब उस मुर्दे के अङ्ग-अङ्ग को काट कर और रसोई में पकाकर खाते हैं ॥२॥ हे मांसाहारी पण्डितो ! आप लोग स्नान करके कल्पित जड़देवी-देवादि की पूजा करते हैं। और नौ गुण सूचक नौ तागे का यज्ञोपवीत पहनते हैं ॥ ३ ॥ परन्तु अहो शोक है ! आप सब अपने हण्डी में हाड़-मांस पकाते हैं, थाली में हाड़-मांस रख कर और मुख से हाड़-मांस चबाते हैं, अब आप लोगों का छह कर्म अच्छा बन गया ! ॥ ४ ॥ यज्ञ करना धर्म है—यह तो ठीक है। परन्तु उन यज्ञों में भैंसा, बकरा, घोड़ादि जीवों का वध करना तो हे मेरे प्रिय बन्धु ! प्रत्यक्ष ही अपकर्म है ॥ ५ ॥ जीव-वध करने वाले ऐ भाई पण्डितो ! यदि आप लोगों को ब्राह्मण कहा जाय, तो कसाई किसे कहा जाय ? ॥ ६ ॥ सद्‌गुरु श्री कबीरसाहेब कहते हैं—हे सन्तो ! सुनो, ये सब संसारी जीव नाना कल्पित वाणी के भ्रम में भूल गये हैं ॥ ७ ॥ कहते हैं "परम पुरुष परमात्मा अपरम्पार है, उसके राज्य में हिंसा-अहिंसा सब उचित है।" परन्तु यह ज्ञान बिरले कोई सत्संग से प्राप्त करते हैं कि शक्ति चले तक हिंसा न बचाकर जितने जीवों को मारा जायगा, उसका बदला अवश्य देना पड़ेगा ॥ ८ ॥

व्याख्या—हिंसकी मांसाहारी हिन्दू तथा ब्राह्मणों की यह बहुत भारी भूल है कि जब घर में कोई परिवार मर जाता है, तब कहते हैं कि घर और कुल-गोत्र सब अशुद्ध हो गया। जिसके घर में कोई परिवार मरा रहता है। उसके घर में कौन कहे पूरे गोत्र में अशौच के भय से हिन्दू लोग प्रायः १३ दिन तक अन्न नहीं खाते। परन्तु आश्चर्य तो यह है कि ये निर्दयी मनुष्य भैंसा, बकरा, मुर्गी, बतख तथा मछली आदि को मारकर उस मुर्दे को बाहर से लाते हैं और उसे काट-काट कर

रसोई में पकाते हैं और खाते हैं। तब ये अशुद्ध नहीं होते। किसी गोत्र (जाति) में मनुष्य के मुर्दा हो जाने पर १३ दिन तक तो वह पूरा गोत्र अशुद्ध रहा और पशु-पक्षी मछली आदि मुर्दाओं को मार काटकर अपने पेट में भर लिये, तब अशुद्ध नहीं हुए। अहो! इन लोगों की अज्ञानता सीमा तक पहुँच गयी है।

इन हिंसकी-मांसाहारी ब्राह्मणों के स्नान करने से और कल्पित जड़-देवताओं के पूजने से क्या होता है? ऋजु (सरलता), तप, सन्तोष, क्षमा, शील, जितेन्द्रिय, दान, ज्ञान तथा दया—ये ब्राह्मणों के धारण करने के नौ गुण हैं। सो आज-कल के ब्राह्मणों ने प्रायः इन सद्गुणों को तिलाञ्जलि दे दिया (बिल्कुल त्याग दिया) है। केवल नौ तागे का जनेऊ दिखावे मात्र का रह गया है।

गोस्वामी जी ने कहा है—

धनवन्त कुलीन मलीन अपी। द्विज चिन्ह जनेऊ उघार तपी॥

अर्थात 'आजकल दुराचारी होने पर भी धनवान लोग ही श्रेष्ठ माने जाते हैं। ब्राह्मणों का चिन्ह केवल जनेऊ रह गया, केवल नंगा रहना ही लोग तपस्वी का लक्षण समझते हैं।'

यज्ञ करना, यज्ञ कराना, दान देना, दान लेना, विद्या पढ़ना और विद्या पढ़ाना—ये ब्राह्मणों के षट्कर्म (छह कर्म) हैं। परन्तु हिंसकी मांसाहारी ब्राह्मणों का अब षट्कर्म क्या हो गया है? उसे सुनिये। 'हँड़िया हाड़ हाड़ थरिया मुख' अर्थात हण्डी[१] में हाड़[२], थाली[३] में हाड़[४] और मुख[५] में हाड़[६]। तात्पर्य यह है कि हण्डी में हाड़-मांस पकाना और थाली में हाड़-मांस रखकर मुख से हाड़-मांस चबाना—यही इन मांसाहारी ब्राह्मणों का षट्कर्म बन गया है।

धर्म के नाम पर जीव वध करने वाले स्वादासक्त मांसाहारी पण्डित लोग कहते हैं "वेद और शास्त्र में लिखा है कि यज्ञ में और देवी के स्थान पर जीव वध करना पाप नहीं बल्कि धर्म है।" प्रथम तो यह बात है कि इन भूले पण्डितों की यह कल्पना है।

वेद-शास्त्र किसी को हिंसा करने की आज्ञा नहीं देते। परन्तु यदि सचमुच किसी वेद-शास्त्र में यज्ञ या दैव-स्थान पर या किसी प्रकार की जीव हिंसा करना धर्म लिखा हो। तो वास्तविक बात यह है कि वे वेद-शास्त्र किसी ऋषि के बनाये न होंगे, वे किसी हिंसकी-मांसाहारी के रचे होंगे। और जीव-वध को धर्मसिद्ध करने वाला वेद नहीं है। बल्कि जीवों को मारने के लिये तीव्र वाण है तथा जीव-वध-विधायक शास्त्र नहीं शस्त्र है। जिस पुस्तक में जीव-हिंसा करना धर्म माना गया हो, उसे पढ़ना महान पाप है। चाहे कोई ब्राह्मण हो, चाहे पण्डित हो, चाहे गोसाईं हो तथा चाहे कोई किसी सम्प्रदाय में साधु का ही वेष क्यों न धारण किये हो। परन्तु जो जीवों का वध करेगा, वह कसाई माना जायगा और मांसाहार पैशाचिक आहार माना जायगा।

जो लोग कहते हैं "पशु-पक्षी आदि हम लोगों के खाने के लिये बने हैं। इनको मारकर, खाने में कोई पाप नहीं हैं।" वे भाई लोग बिल्कुल भूले हैं। जीवों का वध करने से उसका बदला अवश्य देना पड़ेगा और मांस खाना तो मानवता के सर्वथा विरुद्ध है। मांसाहार पशु-पक्षी इत्यादि का है मनुष्य का नहीं।

सन्तों का वचन है—चौपाई—

आपन मांस खात नहिं कोई। यहि से मीठा और नहिं होई॥
आपन गरदन सबै बचावे। पर गर्दन पर दर्द न आवे॥
अपने सिर पर मार टेंगारा। पर पीड़ा क्या देत गँवारा॥
जैसे काँटा अपने सालै। करके कर्क करेजे छालै॥
विष काँटा बोयो संसारा। निज तन गड़िहैं बारम्बारा॥
जितना जीव बध्यो जगमाही। बदला देना पड़िहैं ताहीं॥
जैसा लोहा गढ़ै लोहारा। वैसे मार परै यम द्वारा॥
राम निवासी घट घट वासी। तब कहँ ढूढ़ो मथुरा काशी॥

शिक्षासार—यज्ञ में या कल्पित दैव स्थान पर या किसी प्रकार भी (भरसक) जो जीव का वध किया जाता है वह महान पातक है।

उसका बदला अवश्य देना पड़ेगा। ब्राह्मणादि कोई भी मनुष्य द्वारा हो जीव वध कसाई-कर्म और मांसाहार पैशाचिक-भोजन अवश्य माना जायगा।

४५—(शब्द—७०)

जस मास पशु की तस मास नर की।
रुधिर रुधिर एक साराजी ॥ १ ॥
पशु की मांस भखें सब कोई।
नरहिं न भखें सियारा जी ॥ २ ॥
ब्रह्म कुलाल मेदनी भइया।
उपजि बिनशि कित गइया जी ॥ ३ ॥
मास मछरिया तै पै खइया।
ज्यों खेतन में बोइया जी ॥ ४ ॥
माटी के करि देवी देवा।
काटि काटि जिव देइया जी ॥ ५ ॥
जो तोहरा है साँचा देवा।
खेत चरत क्यों ना लेइया जी ॥ ६ ॥
कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो।
राम नाम नित लेइया जी ॥ ७ ॥
जो कछु कियहु जिभ्या के स्वारथ।
बदला पराया देइया जी ॥ ८ ॥

जैसे मनुष्यों का मांस घृणित है, तैसे पशुओं का भी मांस घृणित है और दोनों का रक्त भी एक समान अशुद्ध है ॥ १ ॥ उन घृणित पशुओं के मांस को मांसाहारी मनुष्य सब खा जाते हैं। परन्तु (नरहिं

न भखें) अर्थात मनुष्य के मांस को मनुष्य नहीं खाते। हाँ! यदि सियारादि मनुष्य के मांस को पावें तो खा जाते हैं ॥ २ ॥ मेदनी (पृथ्वी) पर सृष्टि रचक कुम्हारवत ब्रह्मा हुआ—ऐसा मानते हो। परन्तु वह भी उत्पन्न हो और मर कर कहाँ गया ? फिर तुम किस खेत की मूली हो ? अतः स्वादासक्ति वश जीव-वध और मांसाहार मत करो, एक दिन तुम भी मरोगे और परलोक (पुनर्जन्म) में बदला पटाना पड़ेगा ॥ ३ ॥ जैसे खेत में बोये हुए साग-भाजी को लोग निःसंकोच तोड़कर खा लेते हैं। तैसे हे भूला मानव ! तूने जीवों का वध करके मांस-मछलियों को खा लिया। अथवा जैसे खेत में बोया जाता है, वही काटने को मिलता है। इसी प्रकार तू जैसे जीव-वध करके मांस-मछलियों को खाता है। (पे=परन्तु,) तैसे ही अन्य जन्म में दूसरे प्राणी तुम्हें मारकर खायेंगे, यह सर्वथा सत्य है ॥ ४ ॥ मिट्टी का कल्पित देवी-देवता बनाकर अज्ञानी लोग जीवों का वध करके उसके सामने चढ़ाते हैं ॥ ५ ॥ परन्तु हे भूले लोगो ! तुम्हारा यदि सच्चा देवता है और बिना मांस के उसका यदि पेट नहीं भरता, तो खेत में चरते हुए बकरे, मुर्गे इत्यादि पशु-पक्षियों को पकड़कर वह क्यों नहीं खा जाता है ? ॥ ६ ॥ सद्गुरु श्री कबीर साहेब कहते हैं हे सन्तो ! सुनो, राम सब में रमा मान कर ये संसारी जीव राम-नाम सदैव जपते हैं। परन्तु फिर भी उन्हीं राम स्वरूप जीवों को मार कर खा जाते हैं ॥ ७ ॥ किन्तु जीभ के स्वाद वश जो कुछ भी दूसरे जीव की हिंसा मनुष्य करता है। उसका बदला अवश्य देना पड़ेगा ॥ ८ ॥

व्याख्या — मनुष्य के रक्त-मांस अत्यन्त अशुद्ध हैं, इस बात को मनुष्य स्वयं मानता है। विचार कीजिये ! मनुष्य ही के समान पशु-पक्षी आदि के भी रक्त-मांस घृणित होते हैं। ऐ मनुष्यो ! जिस घृणित बुद्धि से तुम मनुष्य के मांस को नहीं खाते हो। इसी घृणित बुद्धि से पशु-पक्षी और मछली आदि के भी मांस को नहीं खाना चाहिये।

ब्रह्मादि बड़े-बड़े कीर्तिवान, शक्तिशाली व्यक्ति भी इस संसार में

सदैव नहीं रह गये। फिर हे मनुष्य ! तू इस जड़, क्षणभंगुर शरीर का अभिमान करके स्वादासक्ति वश क्यों जीवों का वध करके मांसाहार कर रहा है ? तू भी एक दिन मरेगा। स्वादासक्ति वश जो जीवों का वध करके मांस भक्षण कर रहे हो। इसका बदला पुनर्जन्म में अवश्य देना पड़ेगा। बदला देने का भय त्याग कर गाय, भैंस, बैल, भैंसा, बकरी, ऊँट, सूअर, कबूतर, बतख, मुर्गी, अण्डे, मछली, मेढक, कछुवा तथा सर्प इत्यादि को साग-भाजी के समान जो लोग खा जाते हैं। उन लोगों को उनका बदला अवश्य देना पड़ेगा।

कुछ भूले लोगों ने आपस में ऐसा विचार किया कि "कोई ऐसी युक्ति निकालनी चाहिये जिससे जीव-वध और मांसाहार भी हम सब किया करें और समाज में पापी भी न माने जायँ। बल्कि ऐसी युक्ति लगानी चाहिये कि जीव-वध और मांसाहार रूप पाप कर्म करते हुए भी हम लोग समाज में पुण्यात्मा माने जायँ और लोगों से पुजवावें।" इन बातों पर विचार करते-करते उन लोगों ने यही युक्ति निकाली—मिट्टी, पत्थर, काष्ठ, धातु इत्यादि के कल्पित देवी-देवादि बनाने लगे और उनके थानों पर बकरी, मुर्गी, तथा सूअर आदि चढ़ाने लगे और समाज में यह प्रचार करने लगे कि काली, दिउहार, भैरव, भैरवी, दुर्गा, महाकालिका, ब्रह्म, भूत, प्रेत, इत्यादि के स्थानों पर पशु-पक्षियों का वध कीजिये तो बड़ा पुण्य है। ऐसा करने से धन, पुत्र, निरोग्यतादि की प्राप्ति और शत्रु आदि का विनाश होगा अथवा इन मांसाहारी लोगों ने वेद-शास्त्रों में हिंसा-मांसाहार प्रतिपादक श्लोकों को प्रवेशकर भोली जनता से यज्ञादि में जीव-वध करवाने लगे। संसार तो 'भेड़िया धसान' है ही, एक के पीछे एक गड्ढेमें गिरते जाते हैं फिर तो यज्ञादि में तथा कल्पित देवी-देवों के स्थानों पर जीव-वध करने-करवाने वाले इन धर्मध्वजियों का खूब बना। इधर जीव-वध करके देव-देवी उपासक पुण्यात्मा भी कहलाने लगे और उधर मांस-हड्डी का स्वाद भी चखने लगे।

सद्गुरु कहते हैं, जीव-वध सिद्ध करने वाले हे भूले भाइयो! यदि तुम्हारा सच्चा देवता है और उसका पेट यदि बिना मांस के नहीं भरता। तो खेत में चरते हुए बकरे, सूअर, मुर्गे आदि आदि पशु-पक्षियों को पकड़ कर क्यों नहीं खा जाता है? कि वह भी किसी को डरता है? कि शक्तिहीन है? सचमुच बात तो यह है कि तुम मांसाहारी पण्डित, सोखा, ओझा, नाउत तथा बैगा और भूत-प्रेत, देवी-देवादि के उपासकों की जीभ मांस के लिये लपलपा रही है। सज्जन और साधु मनुष्य ही देव है, इसके अतिरिक्त देवी-देव तो बिलकुल कल्पित हैं।

दृष्टान्त—एक बार एक गाँव में बीमारी पड़ी थी। गाँव के ढोंगी मनुष्य काली के थान पर जुटे हुए कड़ाही चढ़ा रहे थे। एक सोखा (नाउत-बैगा) अभुवाता (झूपता) हुआ एक सूअर को पकड़ कर काली के थान पर चढ़ाना ही चाहता था। अतः उस सूअर के पैर को पकड़ कर उस निर्दयी सोखा ने पृथ्वी पर बल पूर्वक पटका। परन्तु सूअर बेचारा संयोगाधीन बच गया और लड़खड़ाते हुए वहाँ से भगा। इतने में हैजा की टीका लगाने वाला एक सरकारी कर्मचारी आ गया। यह सोखा की निर्दयता को देखकर उससे न रहा गया और उसने उस सोखा पर दो-तीन लाठी जमाया। फिर तो उस सोखा का देवता न मालुम कहाँ चला गया और अभुआना (नाचना-खेलना) बन्द करके भयभीत हो उस कर्मचारी के पैरों पर पड़ गया। अतएव देवी-देव तथा भूत-प्रेतादि की कल्पना और जीव-वध एवं मांसाहार—यह सब स्वादासक्त भूले लोगों का पाप-कृत्य है।

संसारी लोग राम-राम या अल्ला-अल्ला कहते हैं। हिन्दू लोग कहते हैं "सिया राम मय सब जग जानी।" अर्थात राम सब में रमा है। और मुसलमान लोग कहते हैं "कुल्लहू अल्लाः" अर्थात जर्रे-जर्रे में खुदा है। फिर जीव-वध करने वाले हिन्दू और मुसलमानों से पूछा जाता है कि यह बताओ! सब में राम रमा है और सब में खुदा है। खुदा से कुछ नहीं जुदा है। तो क्या गाय, भैंस बैल, भैंसा, ऊँट,

भेड़ा, बकरा, सूअर, मुर्गा और मछली आदि पशु-पक्षी एवं जन्तुओं में राम या खुदा नहीं हैं ? ऐ हिन्दू मुसलमान भाइयो ! क्या तुम्हारे वेद और कुरान में यही लिखा है कि राम और खुदा की पूजा करके और निमाज पढ़कर फिर उन्हीं राम या खुदा रूप प्राणियों पर छूरी चलाया जाय ? किसी ने कहा है—

मन्दिर तोड़ो मसजिद तोड़ो, कोई नहीं मुजाका है।
पर काहू का दिल मत तोड़ो, यह घर खास खुदा का है ॥

हे मनुष्य ! जो कुछ तूने जीभ के स्वाद वश जीवों का वध किया है। उस पराये जीव का बदला तेरे को अवश्य देना पड़ेगा। चाहे गाय को मारो, चाहे मछली को मारो और चाहे किसी जीव का वध करो। बिना उसका बदला दिये तुम्हें छुट्टी न मिलेगी।

शिक्षासार—मांस घृणित वस्तु है, अतः वह मनुष्य का आहार नहीं है। जीवों के वध का बदला अवश्य देना पड़ेगा। अतएव हिंसा-मांसाहार त्यागना परम आवश्यक है।

४६—(रमैनी —४९)

दर की बात कहो दरवेसा। बादशाह है कौने भेसा ॥१॥
कहाँ कूच कहाँ करे मुकामा। मैं तोहि पूछौं मुसलमाना ॥२॥
लाल जर्द की नाना बाना। कौन सुरति को करो सलामा ॥३॥
काजी काज करहु तुम कैसा। घर घर जबह करावहु भैंसा ॥४॥
बकरी मुर्गी किन्ह फुरमाया। किसके कहे तुम छुरी चलाया ॥५॥
दर्द न जानहु पीर कहावहु। बैता पढ़ि पढ़ि जग भरमावहु ॥६॥
कहहिं कबीर एक सैय्यद बोहावै। आप सरीखा जग कबुलावै ॥७॥

साखी—दिन को रहत हैं रोजा, राति हनत हैं गाय।
यह खून वह बन्दगी, क्यों कर खुशी खुदाय ॥ ४९ ॥

ऐ फकीरो ! खुदा के रहने के स्थान की बात बतलाइये ! और यह बतलाइये कि वह खालिक किस वेष में रहता है ? ॥ १ ॥ कहाँ से प्रस्थान और कहाँ पर स्थान करता है ? ऐ मुसलमान भाइयो ! यह मैं आप लोगों से पूछ रहा हूँ ॥२॥ वह लाल वेष में है कि पीले वेष में है या नानाप्रकार के वेषों को बनाता रहता है। आप सब किस रूप को पाँच वक्त सलाम करते हैं ? ॥३॥ काजी साहब ! आप भी यह कैसा हरकत करते हैं ? जो घरोघर में गाय-भैसों का वध करवाते हैं ॥ ४ ॥ बकरी-मुर्गी जबह करने के लिये भी किसने आज्ञा दिया है ? किसके कहने से आप ने मूक-लाचार पशु-पक्षियों पर छूरी चलाया है ॥ ५ ॥ ऐ पीरजादो ! आप लोग प्राणियों के पीर (दर्द) को नहीं जानते और पीर तो कहलाते हैं। शैर-कलामको पढ़-पढ़ कर जगत-जीवों को भ्रमाते हैं ॥ ६ ॥ सद्‌गुरु श्री कबीर साहेब कहते हैं—मुसलमानों में एक सय्यद जाति के लोग होते हैं, ये बड़े जुर्मी होते हैं, ये पुकार-पुकार कर अपने समान बनाने के लिये दुनिया के इन्सानों से मंजूर कराते हैं अर्थात सब को तुरुक बनाना चाहते हैं ॥ ७ ॥

मुसलमान लोग दिन को तो रोजा (उपवास) रहते हैं और रात में गाय या अन्य प्राणी को मारते हैं। इधर जीव-वध करते हैं और उधर पाँच वक्त खुदा की बन्दगी करते हैं। भला ! इन पर अल्ला कैसे खुश होगा ? ॥ ४९ ॥

व्याख्या—स्वरूप की भूल वश लोग नाना कल्पना करके परोक्ष कर्तार में भ्रमते रहते हैं और हिंसादि पाप-कर्म भी करते हैं। मुसलमान भाइयों में अहिंसा और ब्रह्मचर्य का बड़ा अभाव है। ये लोग हिंसा करना और विषयों में अति आसक्त रहना अपना धर्म समझते हैं। यह कितना घनघोर अन्धकार है ?

गाय भैंस और बकरी मुर्गी इत्यादि मूक, लाचार तथा दीन-गरीब जीवों की कुर्बानी करना यह काजी लोगों का इन्साफ है। यह कितने बेरहमी का काम है ? काजी, पीर और पैगम्बर आदि जिस किसी ने

भी यह कुर्बानी (जीव-वध) की प्रथा चलायी हो। उन्होंने ठीक नहीं किया है। छोटे-बड़े किसी प्राणी को मारना—बेरहमी है और बेरहमी करना बड़ों का या विचारवानों—इन्सानों का काम नहीं है। देखिये! कोई मुसलमान भाई जब कुर्बानी करने चलते हैं, तब यह कलमा पढ़ते हैं—"बिस्मिल्लाहिर्रहिमानिर्रहीम" अर्थात मालिक के नाम के साथ 'रहम' (दया) अलफाज़ का इस्तेमाल करते हैं। अहो! खुदा और रहम का नाम लेकर बेरहमी का काम (कुर्बानी) करना कितना अजाब (पाप) है? निर्मानता पूर्वक अपने छाती पर हाथ धर कर इस बात पर मुसलमान भाई और काजी-पीर विचार करें।

जो यह उदाहरण आता है कि खुदा ने हजरत मुहम्मद साहब के पुरखे इब्राहीम अलैस्लाम को ख्वाब (स्वप्न) दिखाया था कि अपने प्यारे प्राणी की हमारे नाम पर कुर्बानी करो। तब इब्राहीम अलैस्लाम ने अपने प्रिय-पुत्र इसमाईल की कुर्बानी के लिये छूरी चलाया। लेकिन छूरी कुन्द हो गयी। इसमाईल का गला नहीं कटा और खुदा की मर्जी से वहाँ एक भेड़ा कटकर आ गिरा। तब से कुर्बानी चली।

विचार करके देखिये यह उदाहरण केवल कल्पित है। विवेक-न्याय से परोक्ष कर्त्ता तो असिद्ध ही है। इसके बाद इन्सान को जो ख्वाब होता है, वह अपने ख्याल का होता है। दूसरा ख्वाब नहीं दिखाता। इसके अलावा इब्राहीम अलैस्लाम साहब ने अपने पुत्र इसमाईल की कुर्बानी की थी। फिर मुसलमान भाई अपने पुत्रों की कुर्बानी क्यों नहीं करते? उचित विचार की बात तो यह है कि न पुत्र की कुर्बानी करनी चाहिये न अपनी कुर्बानी करनी चाहिये और न पशु-पक्षी इत्यादि किसी की भी कुर्बानी करनी चाहिये। कुर्बानी करनी चाहिये काम, क्रोध, लोभ, मोह और मद इत्यादि शैतानों की। मांस खाना कुर्बानी करना इन्सानियत नहीं शैतानियत है। और यदि मनुष्य बिना मांस खाये या बिना कुर्बानी किये नहीं रह पाता है तो उसे अपने अङ्गों को काट-काट कर अपना ही मांस खाना चाहिये। और कुर्बानी

करनी चाहिये। क्योंकि किसी को भी अन्य प्राणी को मार कर खाने का क्या अधिकार है?

प्यारे भाइयो! आप सब खूब गहराई से विचारिये! अपने मांस को बढ़ाने के लिये दूसरे के मांस को काट कर खाना और अपने हित के लिये दूसरे जीवों का वध करना—यह कितनी बेरहमी, कितना नादान-पन और कितना मतलबी होना है? भाइयो! विचारिये जो दूसरे को सताता है, पीड़ा पहुँचाता है, उसी को शैतान कहा जाता है। फिर यदि हम-आप चलते-फिरते हुए छोटे-बड़े किसी प्राणी को भरसक सताते हैं, पीड़ा पहुँचाते हैं, तो हम आप शैतान नहीं हुए? अवश्य हुए। जो मुर्दा खाता है, उसे मुर्दखोर कहा जाता है। विचारिये! यदि आप-हम मांस खाते हैं, तो आप-हम को यदि कोई मुर्दखोर, पिशाच, दानव, दैत्य कह देवे, तो कहनेवाले का क्या दोष होगा? कुछ नहीं।

यदि पूर्वोक्त बातें निर्णय युक्त हैं तो किसी भाई को इस बात पर क्रोध नहीं करना चाहिये और दुखी नहीं होना चाहिये। प्रेम और प्रसन्नता पूर्वक इन अमृतमय निर्णयों को सुनकर हिंसा-मांसाहार का बिल्कुल त्याग कर देना चाहिये।

जिससे जीव का अकाज हो, हिंसा-घात हो, पाप-अज़ाब बढ़े—ऐसा कार्य करवाना काजी का काम नहीं है। काजी को तो इन्साफवर होना चाहिये। और इन्साफ यही है कि चलते-फिरते हुए छोटे-बड़े सब प्राणियों पर 'रहम' करना। कोई इन्सान किसी प्राणी को दुखाने न पावे—यही कार्य करना काजी का काम है।

कोई विचारवान जीव-वध करना रूप निर्दयता की आज्ञा नहीं दे सकता है और खुदा ईश्वर को तो सब पर रहम या दया करने वाला आप लोग मानते हैं। उसमें बेरहमी और निर्दयता हो ही नहीं सकती और यदि वह बेरहम या निर्दयी है। वह जीवों का वध करने की आज्ञा देता है, तो वह सर्वथा त्याज्य है। आप सब स्वयं मानते हैं कि संसार के सब प्राणी ईश्वर या खुदा के सन्तान है। फिर क्या किसी भी छोटे-

बड़े ईश्वर के सन्तान का वध करने से ईश्वर या खुदा प्रसन्न होगा ? कदापि नहीं ! सच पूछिये तो यह स्वार्थी लोगों ने अपनी जीभ के स्वाद वश हिंसा-मांसाहार का प्रतिपादन किया है। हिंसा-मांसाहार को कल्पित कर्ता या किसी महापुरुष की आज्ञा मानना मांसाहारी मनुष्यों का बहाना है।

जो लोग दूसरे प्राणी के पीर (पीड़ा-दर्द) को नहीं जानते और पीरजादे कहलाते हैं। वे भाई लोग कितने अन्धकार में हैं ? कहा है—

साखी—कबीर सोई पीर है, जो जाने पर पीर।
जो पर पीर न जानई, सो तो है बेपीर॥

जो दूसरे के दर्द को जानता है (सब पर मेहरबानी रखता है, किसी प्राणी को नहीं मारता) वही पीरजादा है और जो पराये की पीड़ा को नहीं जानता है, वह तो निर्दयी भूला है। नाना कल्पित वाणियों को पढ़, सुन कर भ्रमते रहते हैं। जबर्दस्ती सबको अपना मजहब कबूल करवाना यह भी महान पातक है।

जब सायंकाल को गाय, भैंसा, बकरा, भेड़ा और मुर्गी-मुर्गादि मारा गया और मांस खाया गया, फिर दिन भर रोजा (उपवास) रहने से क्या फल हुआ ? बल्कि पाप (अजाब) हुआ। मुसलमान भाइयो ! इस बात पर खूब सोचिये कि एक ओर खुदा की बन्दगी करना—और दूसरी ओर खुदा के बख्शीशे हुए प्राणियों की कुर्बानी करना—ये कितनी विरोधी बातें हैं ? अतएव जीव-वध मांसाहार का सर्वथा त्याग करना चाहिये।

शिक्षासार—कुर्बानी या जीव-वध करना किसी श्रेष्ठ पुरुष की आज्ञा नहीं है। काजी, पीर, पैगम्बर वही है जो जीव-दया पालन करता है। सब पर मेहरबानी करता है। अतएव जीव-वध को सर्वथा त्याग करके और मांसाहार भी छोड़कर सदाचारी दयावान एवं मेहरबान होना चाहिये।

४७—(शब्द—८३)

भूला वे अहमक नादाना। जिन्ह हरदम रामहिं ना जाना ॥ १ ॥
बरबस आनि के गाय पछारी। गरा काटि जिव आपु लिया ॥ २ ॥
जीयत जीव मुरदा करि डारे। ताको कहत हलाल हुआ ॥ ३ ॥
जाहि माँसु को पाक कहत हो। ताकी उत्पति सुन भाई ॥ ४ ॥
रजो-वीर्य से माँस उपानी। सो माँस नपाकी तुम खाई ॥ ५ ॥
अपनी देखि कहत नहिंअहमक। कहत हमारे बड़न किया ॥ ६ ॥
उसकी खून तुम्हारी गर्दन। जिन्ह तुमको उपदेश दिया ॥ ७ ॥
स्याही गयी सफेदी आई। दिल सफेद अजहूँ न हुआ ॥ ८ ॥
रोजा बाँग निमाज क्या कीजे। हुजरे भीतर पैठि मुआ ॥ ९ ॥
पण्डित वेद पुराण पढ़ैं सब। मुसलमान कुराना ॥१०॥
कहहिं कबीरदोउगये नरक में। जिन्ह हरदम रामहिं ना जाना॥११॥

वे बुद्धि-हीन लोग भूले हैं। जिन्होंने हरदम (हरघटों) में रमैया-राम चैतन्य को नहीं जाना ॥ १ ॥ मुसलमान लोग गाय को लाकर हठता पूर्वक मारते, उसका गला काटकर हत्या कर देते हैं ॥२॥ जिन्दा प्राणधारी जीव का वध करके मुर्दा कर दिये। फिर भी अज्ञानता वश कहने लगे कि यह हलाल हुआ अर्थात बड़ा उत्तम काम हुआ (सवाबहुआ) ॥ ३ ॥ जिस मांसको तुम सब पाक (शुद्ध) कहते हो। हे भाई! उसकी उत्पत्ति तो सुनिये ॥ ४ ॥ माता के रज और पिता के वीर्य से मांस उत्पन्न हुआ। वह पेशाब युक्त नापाक (अशुद्ध) मांस तुमने खा लिया ॥ ५ ॥ कुर्बानी करने में प्रत्यक्ष जीव-हिंसा देखते और समझते हैं, परन्तु ये भूले लोग अपने बेरहमी की कसर नहीं कहते हैं। बल्कि कहते हैं कि "हमारे बड़े-बूढ़ों ने कुर्बानी की है, अतः कुर्बानी करना पुण्य है" ॥ ६ ॥ परन्तु ध्यान रहे! जिन तुम्हारे बड़े-बूढ़ों

(पीर-पैगम्बरों) ने कुर्बानी करने की आज्ञा दी है। कुर्बानी करने का पाप उनके शिर पर लगेगा और तुम्हारी गर्दन भी एक दिन दूसरा कोई काटेगा। अथवा कुर्बानी की आज्ञा देने वाले तुम्हारे पीर-पैगम्बरों का यदि कोई खून कर देता, तो उन्हें कैसा लगता ? या तुम्हारी ही गर्दन कोई काटे, तो तुम्हें कैसे लगेगा ? फिर अपने दुःख-दर्द के समान दूसरे को नहीं जानते हो, यही भूल है ॥ ७ ॥ हिंसा-मांसाहार और पापाचार करते हुए जवानी चली गयी और बुढ़ापा आ गया। परन्तु हे मनुष्य ! तुम्हारा मन आज भी शुद्ध न हुआ, दया-मेहरबानी न आयी ॥ ८ ॥ मेहरबानी छोड़कर रोजा रहने, बाँग पुकारने और निमाज पढ़ने से क्या हुआ ? केवल हुजरे में घुसकर जड़ाध्यासी हुआ ॥ ६ ॥ सब पण्डित जन वेदपुराण पढ़ते हैं। और मुसलमान लोग कुरान पढ़ते हैं ॥ १० ॥ परन्तु सद्गुरु श्री कबीर साहेब कहते हैं— जिन्होंने हर घटों (देहों) में राम (रूह) न जाना और जीव-वध करता ही रहा। वे हिंसकी पण्डित तथा हिन्दू-मुसलमान दोनों नर्क (दोजख) में जायँगे। (नीचे खानियों में भ्रमेंगे) ॥ ११ ॥

व्याख्या — हर घटों में रमैयाराम रम रहा है। हर शरीरों में रूह जगमगा रहा है। यह सिद्धान्त हिन्दू और मुसलमान मानते हैं। परन्तु शोक है कि वे लोग जीव-वध और कुर्बानी करना नहीं त्यागते। जो जीव-हिंसा नहीं छोड़ते, वे अवश्य महान अज्ञानी मानने योग्य हैं। देखिये ! अविचार और निर्दयता, जो हल में चलने के लिये बछड़ा देती है और पीने के लिये दूध देती है। उस गौ माता को ये निर्दयी मुसलमान भाई लोग पकड़कर हठता पूर्वक मार देते हैं, गौ सदैव सेवा करने एवं पालन करने योग्य है, उसको मारना कितना नमकहरामीपन है ? जीवों की हिंसा करके पुनः पाप न मानकर बल्कि पुण्य (सवाब) मानना, यह तो और घोर अन्धकार है। कुर्बानी करना रूप जीवों की हिंसा है हराम का काम, परन्तु ये भूले भाई लोग हराम को ही हलाल कहते हैं। इनको कौन समझावे ?

लोगों की कैसी बुद्धि है, जो मांस को पाक (शुद्ध) कहते हैं। रज-वीर्य से निर्मित मल-मूत्र और रक्त-हड्डियों में सना हुआ दुर्गन्ध से युक्त यह मांस का पिण्ड कौन विचारवान शुद्ध मानेगा? जहाँ जीव-वध होता है। बड़ी-बड़ी मांस की दुकानें रहती हैं। वहाँ चील्ह, गीध, कुत्ते-कौआ और मक्खियों से दृश्य भयंकर दिखता है। एक साधारण व्यक्ति भी समझ सकता है कि मांस अशुद्ध पदार्थ है। अहो! ऐसे अशुद्ध मांस को लोग खा लेते हैं, तनिक भी मानवता पर ध्यान नहीं।

चाहे कोई पीर-पैगम्बर हो, चाहे कोई ऋषि-मुनि और गुरु-आचार्य हो। जो जीव-वध करने और मांस खाने की आज्ञा देता है। वह तो मनुष्य ही नहीं मानने योग्य है। उन लोगों की आज्ञा के आधार से जितना ही लोग हिंसा करते जायँगे। उतना ही पाप उन गुरुओं को लगेगा, जिन्होंने वध या कुर्बानी करने की आज्ञा दी है। वे करोड़ों कल्पों तक पापों के फल अगति यातना से छुट्टी नहीं पायेंगे। हिंसा-मांसाहार विधायक कोई भी वेद-कितेब और श्लोक-कलाम मानने योग्य नहीं है।

प्राणियों को मार-मार कर अपने पेट में उनका कब्र बनाते-बनाते अर्थात हिंसा-मांसाहार करते-करते लोग जवान से बुड्ढे हो जाते हैं। परन्तु उनकी बेरहमी और निर्दयता नहीं छूटती। उनके मन में रहम-दया नहीं आती। अपने अङ्ग में काँटा गड़ जाय तो मनुष्य बहुत विकल हो उठता है। न जाने क्या जानकर वह दूसरे के गला पर छूरी चलाता है। क्या जिसके ऊपर छूरी, तलवार चलायी जाती है, जिन प्राणियों को मारा, काटा जाता है। जीते ही जलाया जाता है। जीते ही उनके अङ्ग-अङ्ग पृथक-पृथक किये जाते हैं। क्या उन्हें कष्ट नहीं होता? क्या तुम्हारे समान उनमें चेतन जीव या रूह नहीं हैं? यदि कहिये पशु-पक्षी आदि अनावश्यक जन्तु किस काम आयेंगे? अतः इन्हें मारकर खा ही लेना चाहिये। तो यह बताइए? आप ऐसे हिंसकी पेट और भोग का पालन रूप पशु आचरण करने वाले मनुष्यों की क्या

आवश्यकता है ? उन पशु-पक्षी की तुम्हारे द्वारा क्या रक्षा है ? फिर तुम लोगों को कोई मारकर समाप्त करना चाहे, तो तुम्हारे न्याय से क्या दोष होगा ? लाचारों को मार डालना यदि न्याय है, तो तुमसे बलवान मनुष्य तुम्हें मारने पर तत्पर हो जायँ, तो किस न्याय से बचोगे ? अतएव किसी प्राणी को मारने का अधिकार किसी को नहीं है। मुसलमान भाइयों से कहना है कि यदि आप लोग दया-मेहर त्यागकर लाचार पशु-पक्षियों को मार-मार कर खाते हैं। तो आप लोगों के ३० रोजा रहने से और पाँच वक्त निमाज पढ़ने और बाँग पुकारने से कुछ फल नहीं होगा। क्योंकि—

साखी— दिन को रहत हैं रोजा, राति हनत हैं गाय।
यह खून वह बन्दगी, क्यों कर खुशी खुदाय ॥
(बीजक)

अथवा

"जाके दया धरम नहिं तन में, मुखड़ा क्या देखो दर्पन में।"

चाहे कोई पण्डित हो चाहे मौलवी, चाहे कोई हिन्दू हो चाहे मुसलमान, चाहे कोई वेद-पुराण पढ़े, चाहे कोई कुरान-शरीफ पढ़े— जो हिंसा-मांसाहार करेगा, वह नर्क में (दोजख में) अवश्य जायेगा। अर्थात हिंसा-मांसाहार करने से पशु-पक्षी और कीट-पतङ्गादि योनियों में देह धर-धर कर बहुत काल तक जीव नाना कष्ट को पाता रहता है।

"कहहिं कबीर वै दूनों भूले, रामहिं किनहु न पाया।
ये खसी वै गाय कटावैं, बादहिं जन्म गमाया ॥"
(बीजक)

दृष्टान्त—एक बार शिव और पार्वती एक मार्ग पर जा रहे थे। कुछ दूर चलने पर एक मछुआ (मछली मारने वाला) मिला। वह मछलियों को मार-मार कर और सुखा-सुखा कर एक बड़ी ऊँची राशि लगा रखा था। यह देखकर पार्वती ने शिवजी से पूछा इस मछुआ की क्या गति होगी ? शिवजी ने कहा—इसकी बड़ी बुरी दशा होगी।

बहुत दिनों के पश्चात उसी मार्ग से होकर शिव-पार्वती, पुनः निकले। तो क्या देखे—एक बड़ाभारी ऊँट पड़ा है। उसके सारे अङ्ग में कीड़े पड़े हैं। वह जिधर करवट लेता है उधर आध सेर कीड़े गिर जाते हैं। वह इसी प्रकार दुःखों में बहुत दिनों से पड़ा था। पार्वती ने कहा—यह ऊँट किस पाप से इतना दुखी है ? शिवजी ने कहा—यही वह मछुवा है जो पहले यहीं पर मछली की राशि लगाये मिला था। अपने पाप-कर्म के कारण अब वह मछुआ ऊँट हुआ है और इसके शरीर भर में कीड़े काट रहे हैं। यहाँ तक कि इसका सारा शरीर कीड़ों से पूर्ण हो गया है। इसी प्रकार यह अनेकों जन्म तक नर्क भोगता रहेगा। अतएव जीव-वध का बदला मनुष्य को अवश्य देना पड़ेगा। सबसे बड़ा भारी पाप भरसक किसी की जान दुखाना है। कहा है—

"परहित सरिस धर्म नहीं भाई। पर पीड़ा सम नहिं अधमाई ॥

तुलसी यहि जग आय के, बदला कहीं न जाय।
जो शिर काटे आन को, अपनो होय कटाय ॥"

शिक्षासार—जीव-वध या कुर्बानी करना किसी भी मत से उचित नहीं है। मांस महान अपावन (नापाक) पदार्थ है। हिंसा-मांसाहार करने वाले के पूजा-पाठ, तीर्थ-व्रत और रोजा-नमाज आदि सब निष्फल (अनावश्यक) हैं। अतः ऐ प्यारे भाइयो ! कृपया हिंसा-मांसाहार बिल्कुल त्याग दीजिये।

४८—(शब्द-६३)

बाबू ऐसो है संसार तिहारो। इहै कलि व्यौहारो ॥ १ ॥
को अब अनुख सहत प्रतिदिनको। नाहिन रहनि हमारो ॥ २ ॥
सुमृति सोहाय सबै कोइ जानै। हृदया तत्त्व न बूझै ॥ ३ ॥
निर्जिव आगे सर्जिव थापै। लोचन किछउ न सूझै ॥ ४ ॥
तजि अमृत विष काहेक अँचवै। गाँठी बाँधिन खोटा ॥ ५ ॥

चोरन दीन्हों पाट सिंहासन। साहुन से भौ ओटा ॥ ६ ॥
कहहिं कबीर झूठे मिलि झूठा। ठगही ठग व्यौहारा ॥ ७ ॥
तीनि लोक भरपूरि रहा है। नाहीं है पतियारा ॥ ८ ॥

ऐ भैया चैतन्य जीवो! ऐसा ही तुम्हारा मानन्दीकृत प्रापंचिक संसार है। यही सब कलि कलुष एवं पाप युक्त तुम लोगों का व्यवहार है ॥ १ ॥ अब कल्याण-साधन करने योग्य नर-तन को पाकर भी नित्य-नित्य तुम लोगों की झंझटों को कौन विवेकी सहेगा? क्योंकि तुम लोगों का जो कलुषित हिंसात्मक आचरण है, वह हम विवेकियों के रहनी-आचरण में-से नहीं है। अतएव हम विवेकियों का निवास भी तुम ऐसे प्रपंचियों में नहीं हो सकता ॥ २ ॥ स्मृतियों में हिंसात्मक-अहिंसात्मक सभी प्रसंगों का वर्णन है, अतः वह सब को अच्छा लगता है, उसके कथन को सब अच्छा समझते हैं। परन्तु हृदय में रमने वाले रमैयाराम चेतनतत्त्व को और उसके विवेक तत्त्व को तो इन अविवेकियों में से कोई सत्संग में समझते नहीं ॥ ३ ॥ अतएव निर्जीव कल्पित जड़ देवी-देवादि के सामने सजीव भैंसा, भेड़, बकरा, सूअर एवं मुर्गा इत्यादि का बलिदान करते हैं। इसलिये इन हिंसकी जड़ाध्यासी लोगों के नेत्रों से कुछ भी नहीं दीखता ॥ ४ ॥ भला! ये लोग चेतनतत्त्व और जीवदया रूप अमृत को त्यागकर जड़ देवी-देव पूजन और जीवहिंसा रूप विष को क्यों पी रहे हैं? ये लोग तो स्वरूप-ज्ञान और अहिंसा धर्म रूप हीरा को त्यागकर जड़ाध्यास और हिंसा रूप कङ्कर को अपने गाँठ में बाँध लिये ॥ ५ ॥ कल्पित जड़ देवी-देवादि तथा ओझा-सोखा, नाउत-बैगा एवं गुरुआ रूप (ज्ञान धन चुराने वाले) चोरों को तो ये संसारी लोग उत्तम-उत्तम वस्त्र चढ़ाते और ऊँचे आसन पर बैठाते हैं। और साहु रूप विवेकशील पारखी सन्तों से मुख छिपाते हैं ॥ ६ ॥ सद्गुरु श्रीकबीरसाहेब कहते हैं—नाना अनुमान, कल्पना, जड़ देवी-देवादि तथा वाचाल रूप झूठों की संगत में मिलकर यह जाव

भी भूठे का अध्यासी हो गया है। क्योंकि यह मानी बात है कि ठग के पास बैठने से वह ठगाई का ही आचरण बतलायेगा ॥ ७ ॥ यह अनुमान कल्पना और भ्रमिकों का भ्रम रज, सत, तम गुण युक्त तीनों प्रकार के मनुष्यों में परिपूर्ण हो रहा है। विवेकियों के सत्य वचन पर इन संसारियों को विश्वास नहीं है ॥ ८ ॥

व्याख्या–यह संसार इतना घोर जङ्गल के समान है, इतना गहन अज्ञानरात्रि-तम से आच्छादित है कि इसका चिन्तन करते ही सन्ताप उत्पन्न हो जाता है। संसार में पापाचार का व्यवहार अधिक है। अपने तन, मन तथा धन की हानि कोई सहने वाला नहीं है। परन्तु दूसरे के तन, मन एवं धन का लोग घात करते रहते हैं। निर्दयी लोगों को जीव-हिंसा का तनिक भी विचार नहीं है। वे किसी प्राणी पर छूरी चलाना साग-मूली काटने के समान समझते हैं। स्वरूप-ज्ञान को त्यागकर और जड़ देवी-देवादि के पुजारी बनकर सब अविवेकी जीव महान प्रपंची और हिंसकी हो रहे हैं। इन अविवेकियों के अत्याचारों से घबराकर विवेकवान कहते हैं ऐ भैया! तुम लोगों के कल्पना-प्रपंच से, तुम लोगों के अत्याचार से, तुम लोगों के संसार और संगत से मैं भर पाया, घबरा गया। अब तुम लोगों के साथ हमारा संबंध नहीं होगा।

वेद-स्मृति के मन्त्र-श्लोकों का मनमानी अर्थ करके और उसमें हिंसात्मक वचन सिद्ध करके पठित-वधिक लोग दिन दहाड़े हिंसा करते हैं उनके हृदय के विवेक-नेत्र बिल्कुल फूटे हैं। कल्पित, चेतन-हीन जड़ देवी, दुर्गा, दानवी, भैरवी, महाकाली, कालिका, योगमाया, आदिशक्ति, देव, भैरव, दिउहार, ब्रह्म, भूत, पिशाच, बटुक, नट्टबीर एवं जिन्द इत्यादि मानकर या उनकी मिट्टी, पत्थर इत्यादि की कल्पित मूर्ति बनाकर उनके सामने चेतन प्राणी भैंसा, बकरा, भेड़ा, सूअर, तथा मुर्गी आदि का वध करते हैं। इन पापियों के नेत्रों से कुछ भी नहीं

दिखता, केवल नाम मात्र के कल्पित देवी-देवादि के लिये चेतन जीव को कष्ट देते हैं। यह कितना महान अन्याय है ?

जो अमृत तजकर विष पीता है, जो हीरा त्यागकर ठीकरा बाँधता है, जो चोर का स्वागत करता और साहु से मुख छिपाता है, वह भूला है। इसी प्रकार जो स्वरूपज्ञान और पारखी सन्तों की संगत तथा जीव दया त्यागकर कल्पना, भ्रम, देवी-देवादि का पूजन, हिंसा इत्यादि करता है और ओझा-सोखा, नाउत-बैगा के भ्रमाने से भ्रमा करता है, वह महा नादान है।

मिथ्यावादियों के संग से लोग मिथ्यावादी हो जाते हैं, धूर्त की संगत से धूर्ताई सीख जाते हैं। इसी प्रकार कल्पित देवी-देवादि की मानन्दी और भ्रमिकों की संगत में मिलकर यह जीव महान प्रपंची, भ्रमिक, हिंसकी और अत्याचारी हो गया है। यह अत्याचार चारों ओर व्याप्त है। विवेकियों के निर्णय पर इन अविवेकियों को विश्वास नहीं है।

शिक्षासार—हिंसा, प्रपंच और जड़ देवादि पूजन त्यागकर सद्‌गुरु की भक्ति और सत्संग करते हुए अपना उद्धार करना चाहिये।

४६—(शब्द—१०५)

ये भ्रमभूत सकल जग खाया। जिन जिन पूजा तिन जहँड़ाया॥१॥
अण्ड न पिण्ड न प्राण न देही। कोटि कोटि जिव कौतुक देही॥२॥
बकरी मुरगी कीन्हेव छेवा। आगल जन्म उन औसर लेवा॥३॥
कहहिं कबीर सुनो नर लोई। भुतवा के पुजले भुतवा होई॥४॥

ये भ्रम मात्र का कल्पित भूत सारे संसार को भ्रमा दिया। इस कल्पित भूत-प्रेत का जिन-जिन लोगों ने पूजन किया, वे अज्ञान में पड़कर खराब हुए ॥१॥ इस कल्पित भूत के न सूक्ष्म शरीर है, न स्थूल शरीर है, न प्राण है और न जीव है। (वन्ध्या पुत्रवत् यह सर्वथा असत्य है।) परन्तु तो भी करोड़ों-करोड़ों अज्ञानी मनुष्य इस भ्रम-भूत

के तमाशा में अपना शिर पटक रहे हैं। अथवा अज्ञानी मनुष्य ऐसे कल्पित भूत के नाम पर प्राणियों को काट-काट कर चढ़ाते हैं ॥ २ ॥ परन्तु बकरी-मुर्गी आदि जिन प्राणियों को तूने मारा है। आगे जन्म में वे तुमसे बदला अवश्य लेंगे ॥ ३ ॥ सद्गुरु श्री कबीरसाहेब कहते हैं—हे मनुष्यो सुनो ! कल्पित भूतों को पूजने वाले जड़ तत्त्व के अध्यासी जन्मादिक दुःख के बारम्बार भागी होते हैं ॥ ४ ॥

व्याख्या—यहाँ श्रीकबीरसाहेबजी ने भूत-योनि का खण्डन किया है। लोग कल्पना करते हैं कि मनुष्य, अण्डज और पिण्डजादि खानियों के समान भूत की भी एक खानि है। परन्तु यह मनुष्य की कोरी कल्पना है, इस शब्द में साहेब जी ने कहा है 'ये भ्रम भूत सकल जग खाया' अर्थात यह भ्रम करके जो केवल मन से माना हुआ भूत है, इसने सब अज्ञानियों को भ्रमा दिया। एक ने कल्पना करके दूसरे से वही संशय लगाया और एक-से-एक इस संशय वाणी को सुन-सुनकर भ्रमते ही गये। जिन्होंने इस भ्रम मात्र के कल्पित भूत को सत्य मानकर इसका पूजन-अर्चन किया, वह बड़े दुःख का भागी हुआ।

विवेक से भूत-योनि असिद्ध है, क्योंकि वन्ध्यापुत्र के समान माने हुए इस भूत के न अण्ड नाम सूक्ष्म-शरीर है, न पिण्ड नाम स्थूल-शरीर है, न प्राण है और न देही नाम जीव ही है। सूक्ष्म-शरीर इसलिये नहीं है कि जीव जब देह छोड़ता है तब तत्काल ही चारों खानियों की किसी योनि में जाकर शरीर धारण करता है। शरीर त्याग काल से लेकर अन्य योनि की प्राप्ति काल तक ही केवल सूक्ष्म-शरीर के साथ जीव रहता है। अन्यथा स्थूल-शरीर के साथ ही जीव सहित सूक्ष्म-शरीर का सम्बन्ध रहता है। इसके अतिरिक्त केवल सूक्ष्म-शरीर की कोई योनि नहीं होती। मनुष्य, अण्डज, पिण्डज और उष्मज ये चारों खानियाँ स्थूल-शरीर युक्त सबको प्रसिद्ध हैं। यदि केवल सूक्ष्म-शरीर युक्त ही भूत माना जाय, तो वह किसी को प्रत्यक्ष नहीं होगा और किसी को सुख-दुःख नहीं दे सकेगा। जैसे आम-बरगद इत्यादि

के केवल बीज से फाटक, खड़ाऊँ, पटरा या पीढ़ा इत्यादि नहीं बनाया जा सकता है। जब आम या बरगद (बट) इत्यादि का बीज मिट्टी जल से संयोग पाता है और वृक्षाकार होकर कुछ दिन में खूब मोटा-ताजा हो जाता है। तब उसे काट कर फाटक (किवाड़) खड़ाऊँ, पटरा इत्यादि बनाया जा सकता है। केवल बीज मात्र से नहीं। इसी प्रकार स्थूल-शरीर से रहित बीजवत केवल सूक्ष्म-शरीर ही भूत-योनि नहीं मानी जा सकती। यह जीव केवल सूक्ष्म-शरीर द्वारा कहीं प्रकट होकर किसी को सुख-दुःख नहीं दे सकता। इसलिये सूक्ष्म-शरीर ही को भूत-योनि मानना युक्ति-विरुद्ध एवं न्याय-असंगत है।

यदि कहिये "भूत में ऐसी शक्ति है कि वह जब चाहे तब स्थूल-शरीर धारण करले और जब चाहे तब सूक्ष्म-शरीर धारण करले।" तो यह भी अयुक्त कथन है। क्योंकि खानियों में प्रायः कुछ समय में सूक्ष्म-शरीर से स्थूल-शरीर बनता है। तुरन्त नहीं। इसके अतिरिक्त यदि मन अनुसार भूत तुरन्त स्थूल-शरीर धारण करता है। तो वह स्थूल-शरीर सब को दिखायी क्यों नहीं देता ? मान लीजिये, क्षण में भूत ने भैंसा या हाथी इत्यादि का रूप बना लिया और क्षण में उस स्थूल-शरीर को त्याग कर सूक्ष्म शरीर धारण कर लिया, तो वह पूर्व का भैंसा और हाथी इत्यादि का शरीर परमाणु युक्त स्थूल द्रव्य होने से तुरन्त कहाँ लोप हो जायगा ? क्योंकि प्राणियों के त्यागे हुए शरीर अग्नि में जलाने से शीघ्र नष्ट होते हैं, परन्तु उसको जलाते हुए भी लोग देखते हैं और जले हुए राख इत्यादि का भी चिह्न सब को दीखता है। यदि भूतों का त्यागा हुआ स्थूल-शरीर पृथ्वी पर पड़ा रहता, तो लोग देखते। चिल्ह-गीध और कौए-कुत्ते इत्यादि नोच-नोच कर खाते। भूत की योनि होती, तो उनके पुत्र कुटुम्बी और सम्बन्धी दिखलाई पड़ते। अतएव कल्पित भूत के स्थूल शरीर भी नहीं है। स्थूल-शरीर न होने से प्राण का रहना स्वयं असिद्ध है, क्योंकि स्थूल-शरीर में ही प्राण रहता है। प्राण रहित जीव का रहना भी महान असिद्ध है। अतएव आकाश फूल, वन्ध्या-पुत्र, शशा शृङ्ग के समान ही भूत-प्रेत की योनि असिद्ध है।

जिस बाग में, जिस वृक्ष के नीचे, नदी तट पर या जिन स्थलों पर भ्रमिक लोगों से सुना गया है कि यहाँ भूत रहता है। वहाँ-वहाँ पर रात में जाने पर अबोधी मनुष्य के मन में संशय उत्पन्न होता है और किसी पशु-पक्षी की आहट जानकर भूत का भ्रम कर लेता है। ठूठ, जुट्टा देखकर भयभीत हो जाता है। और जहाँ पर भूत-प्रेत का वास नहीं सुना गया, वहाँ जाने पर प्रायः कोई भय नहीं होता है।

एक ग्राम में एक मियाँ जी सहित कुटुम्ब रहते थे। उनका घर लम्बा-चौड़ा था। सब कुटुम्बियों के सहित मियाँ जी को यह भय था कि घर के दक्षिण वाले कमरे में भूत रहता है। सायंकाल होते ही उस कोठरी की ओर कोई नहीं जाता था। रात समय में मियाँजी एक दो बार उस कमरे में गये, तो उन्हें ज्ञात हुआ कि मनुष्य का रूप धर कर भूत साक्षात मिला है। और लड़ाई किया है। एक दिन मियाँ जी एक सज्जन के पास गये और भूत का भय बतलाये और यह भी कहे कि वह भूत मुझे साक्षात मिलता है। सज्जन ने कहा—अच्छा आज रात होने पर मेरे पास आना, तब मैं बतलाऊँगा। रात हो आयी, मियाँ जी पुनः उस सज्जन के पास गये। सज्जन ने मियाँ जी के हाथ में स्याही लगा दिया और कहा कि अभी आप अपने घर के दक्षिण वाले कमरे में जाइये और जैसे भूत सामने आये, तैसे उसकी दाढ़ी पकड़ कर उसके मुख पर चार थप्पड़ें लगाना। फिर वह आप का घर छोड़ देगा।

मियाँ जी गये तथा अपने दक्षिण वाले कमरे में घुसे, तैसे ही मारे भय के भयभीत हो गये और उन्हें ऐसा ज्ञात हुआ कि बड़े-बड़े नख-शिख धारण किये भूत आ गया। इतने में उन्होंने उस कल्पित भ्रम-भूत की दाढ़ी को बायें हाथ से पकड़ कर उसके मुख में थप्पड़ें लगाने लगे। उधर पीछे से वह सज्जन मनुष्य जा पहुँचा और प्रकाश जलाया और देखा तो मियाँजी अपनी ही दाढ़ी अपने बायें हाथ से पकड़े हुए दाहिने हाथ से अपने ही मुख में तड़ातड़ मार रहे हैं। सज्जन ने कहा—मियाँ जी! अब भूत पकड़ लिये? देखिये भूत की भावना और भ्रमवश आपही अपने हाथ

से अपनी दाढ़ी पकड़कर अपने मुख में आप ही थप्पड़ें लगा रहे हैं। मियाँ जी ने कहा—मैंने अपने को नहीं मारा है। यहाँ भूत ही था। उसी को मैंने थप्पड़ें लगाया है। आपके आने पर भूत भाग गया है। सज्जन ने कहा—आप दर्पण लेकर अपने मुख को देखिये तो भला! मियाँ जी ने दर्पण से मुख देखा, तो हाथ में लगी हुई सब स्याही अपने मुख में लगी है। पाँचों अँगुलियों के चिह्न गाल में बने हैं। यह देखकर मियाँ जी आश्चर्जित हो रहे। सज्जन ने कहा—देखिये, मियाँ जी! भूत-प्रेत कहीं नहीं होते। यह मनुष्य अज्ञानी लोगों की संशयात्मक वाणी सुनकर मन में शंका बना लेता है। वही शंका भ्रम-भूत बनकर समय-समय से स्वयं जीव को कष्ट देती रहती है। मन का भ्रम ही भूत है। और कहीं भूत नहीं है। इस प्रकार अनेक युक्तियों से सज्जन ने समझाया। फिर मियाँ जी का भ्रम-भूत निवारण हो गया।

जो लोग कहते हैं कि मैंने प्रत्यक्ष भूत-प्रेत, जिन्द-चुड़ैल या औघड़-ब्रह्म देखा है या लड़ा है। वे निरे अज्ञानी रहते हैं या अपनी बड़ाई करने वाले रहते हैं। लोगों में अपनी बड़ाई हाँकते हुए कहते हैं 'मैंने भूत से लड़ा है' यह सब अज्ञान और भ्रम है। इस प्रकार निर्णय विवेक से जब भूत-प्रेत की खानि सिद्ध ही नहीं होती, तब वे किसी के लगकर सुख दुःख क्या देंगे? भूत के भय से उत्पन्न हुई बीमारी जो झाड़-फूँक करवाने से अच्छी हो जाती है। उसका यही तात्पर्य है कि वह बीमारी भ्रम से होती है और झाड़-फूँक की भावना से अच्छी हो जाती है। जो अन्य बीमारियाँ झाड़-फूँक से अच्छी होती-सी देखी जाती हैं, वह वास्तव में झाड़-फूँक से नहीं अच्छी होतीं। उसका तात्पर्य यह है कि जब बीमारी के अन्त होने का समय आया, कर्म भोग पूरा हुआ और उसी समय झाड़-फूँक भी करवाया गया, तो बीमारी तो गयी कर्म भोग पूरा होने से। परन्तु भूले भाइयों ने मान लिया कि झाड़-फूँक करने से बीमारी गयी है। जो लोग समय-समय पर अपने ऊपर भूत-प्रेत चढ़ा हुआ मानकर हाथ-पैर पटक-पटक कर अभुआते-खेलते हैं। वे भ्रमिक, अज्ञानी या नकलची होते हैं।

जैसे काम-भावना उठने पर तन-मन में व्याकुलता होती है और मनुष्य विवश हो जाता है। जैसे क्रोध-भावना उठने पर इन्द्रिय-मन में गर्मी छा जाती है। आँख और मुख रक्त वर्ण हो जाते हैं। मनुष्य मुख से दूसरे को गाली देने लगता है या अधिक क्रोध में अपना ही हाथ-पैर काटने लगता है और मनुष्य विवश हो जाता है। जैसे मोह-भावना उठने पर रोवाई, शोक, विलाप इत्यादि उत्पन्न हो जाते हैं, मोह में मनुष्य पागल हो जाता है। जैसे भय की भावना उत्पन्न होने पर मनुष्य भीरु (डरपोक) हो जाता है। इन सब उदाहरणों के अनुसार ही अज्ञानी मनुष्यों के मन में भूत की एक भावना उत्पन्न होती है। अतः उस भावना के उत्पन्न होने पर मनुष्य भयभीत हो जाता है और अभुआने (खेलने-झूपने) लगता है। जैसे काम, क्रोध, मोहादि की भावना अपने हृदय में ही अध्यास रूप में है और समय-समय पर उत्पन्न हो-होकर जीव को विवश करती हैं। इसी प्रकार भूत की संशय-वाणी को बालपन से ही सुन-सुनकर उस भ्रम-भूत की भावना मनुष्य के हृदय में दृढ़ हो गयी है। वह भ्रम-भूत की भावना समय-समय से मनुष्य को भ्रमा देती है। जैसे काम-क्रोध और मोहादि मनोविकार हृदय में रहते हैं। तैसे भ्रम-भूत की भावना भी एक अज्ञान कृत मनोविकार है और यह भी हृदय में रहती है और बाहर कहीं भी भूत-प्रेत नहीं हैं। मन का भ्रम ही भूत है।

अहो ! संसार के अधिक-से-अधिक पढ़-अपढ़ नर-नारी इस महा मिथ्या कल्पित भूत के भ्रम में पड़े हैं। भूत-प्रेत, जिन्द-चुड़ैल, औघड़-ब्रह्म और अनेक कल्पित देवी-देवता मानकर लोग जीवों का वध करते हैं। भूले हुए ढोंगी सोखा-ओझा और नाउत-बैगा से भभूत झड़वाते हैं। दुआ-तावीज पहनते हैं। भूत-प्रेत, देवी-देवादि मानकर जीव-वध करने वाले लोगों को समझना चाहिये जो बकरी-मुर्गी और अन्यान्य जन्तुओं को वे मारेंगे, उसका बदला अगले जन्म में उन्हें अवश्य देना पड़ेगा।

जो लोग कल्पित भूत पूजते हैं, उनकी बड़ी दुर्गति होती है। श्री कबीरसाहेब कहते हैं "भुतवा के पुजले भुतवा होई।" अर्थात कल्पित भूतों को पूजने से भुतवा नाम जड़ाध्यासी होना पड़ेगा। भूत कहते हैं जड़ तत्त्व को, जो भूत पूजते हैं, वे पुनः-पुनः जड़ तत्त्वों का अध्यास धारण करके पशु-पक्षी तथा कृमि आदि दुःखमय खानियों में भ्रमते रहेंगे।

निर्णय-विवेक से भूत-प्रेत असिद्ध हैं। इसलिये सब नर-नारियों को चाहिये कि भूत का भ्रम बिल्कुल त्याग दें और अपने बाल-बच्चों को कभी भी कल्पित भूत-प्रेत का भय न देकर बल्कि समझा-बुझा कर भूत का भ्रम उनके मन से भगा देवें। ओझा-सोखा, नाउत-बैगा के पास कभी भी दुआ-भभूत झड़ाने नहीं जाना चाहिये और कल्पित भूत-प्रेत या देवी-देवादि के नाम पर जीव-वध करना तो बड़ाभारी पाप है। इसको स्वयं त्यागना चाहिये और समझा-बुझाकर दूसरे से भी छुड़वाना चाहिये।

शिक्षासार—भूत-प्रेत, चुड़ैल, टोनही, नट्टवीर, दानव, दैत्य, पिशाच, डाकिनी, शाकिनी, भैरव-भैरवी, बटुक, मशान, जिन्द, ब्रह्म, औघड़, बैताल, काली, डिहार, बरहना, पीर, गाजीमियाँ, तकिया, महामाया, कालिका, दुर्गा, योगमाया, आदिशक्ति, जगदम्बा, शीतला, फूलमती-भवानी तथा देवी-देवादि—ये सब बिल्कुल असत्य हैं, मनुष्यों की कल्पना मात्र हैं। आकाश के फूल के समान मिथ्या हैं। अतः इन सब की मानन्दी, पूजा-अर्चा, झाड़-फूँक, जीव-वध और मद्य-मांस भक्षणादि मनुष्य मात्र को सर्वथा त्याग देना चाहिये और विवेक-शील सद्गुरु-संतों के सत्संग में लगकर अपना जीवन सुधार करना चाहिये।

भूत-खण्डन-पद

नहिं भूत-प्रेत की खानि कोई, मानव भाई क्यों भूले हो॥ टेक॥
यदि भूत-प्रेत जग में होते, तो क्यों न देखने में आते।

यह मन की एक भावना है, अपने अज्ञान में भूले हो ॥ १ ॥
नाउत ओझा बैगा सोखा, इनके जालों में फँसो नहीं।
भ्रम-भूत को दिल से दो खदेड़, क्यों भ्रममें पड़कर हूले हो ॥ २ ॥
बकरी मुर्गी शूअर भेड़ा, जिन जीवों को तूने मारा।
उनका बदला देना होगा, क्यों माया में तुम फूले हो ॥ ३ ॥
नहिं भूत-प्रेत जग में होते, जो भूत मानते भूत सोई।
तजि भूत-भरम गुरु-भक्ति करो, अभिलाष तभी सुख मूले हो ॥४॥

साखी—

आन देव को आस करि, मुख मेले मद मास।
जाके जन भोजन करे, निश्चय नरक निवास ॥
सो वर्षहिं गुरु भक्ति करि, एक दिन पूजै आन।
सो अपराधी आतमा, परे चौरासी खान ॥
अवगुन कहूँ शराब का, ज्ञानवंत सुनि लेय।
मानुष सो पशुआ करै, द्रव्य गाँठि का देय ॥
काम हरक्कत बल घटै, तृष्ना नाहीं ठौर।
ढिग ह्वै बैठे दीन के, एक चिलम भर और ॥
गऊ जो विष्ठा भच्छई, विप्र तमाकू भङ्ग।
साधु शस्त्र जो बाँधई, यह कलियुग का अङ्ग ॥
भाँग तमाकू छूतरा, पर निन्दा पर नार।
कहैं कबीर इनको तजै, तब पावै दीदार ॥
हुक्का तो सोहै नहीं, हरिदासन के हाथ।
कहैं कबीर हुक्का गहै, ताकर छोड़ो साथ ॥
मुख में थूकन दे नहीं, मोहर कोइ जो देहि।
कहैं कबीर या चिलम को, जूठ जगत मुख लेहि ॥
काजल तजै न श्यामता, मुक्ता तजै न श्वेत।
दुर्जन तजै न कुटिलता, सज्जन तजै न हेत ॥

दुर्जन को करुणा बुरी, भलो सज्जन की त्रास।
सूरज जब गरमी करै, तब बरसन की आस॥
कछु कहि नीच न छेड़िये, भलो न वाको संग।
पत्थर डारै कीच में, उछलि बिगारै अंग॥

शब्द

हमारे मन जीव दया उर धारो॥ टेक॥
जब तुम दुख चाहत नहिं अपना, किमि दुख देत परारो।
सब स्वतन्त्र प्राणी कर्मन वश, केहि पर तब अधिकारो॥ १॥
तुम ही मनुष सुजान सबल, सब भाँति समर्थ विचारो।
पशु मृग मीन अण्ड खग निर्बल, दीन गरीब लचारो॥ २॥
सबल को चही अबल की रक्षा, नहिं तेहि मारि अहारो।
है धिक्कार जीभ के स्वारथ, बनत चील्ह बक स्यारो॥ ३॥
मुर्दा देखि अशुचि घर मानत, खात न ताहि लजारो।
अशमशान निज उदर बनावत, पापी नरक दुवारो॥ ४॥
तृणभर पीर देहुगे काहू, सो बढ़ि ब्याज पहारो।
लोक और परलोक भुगति हौ, दुख अभिलाष अपारो॥ ५॥

॥ फल ॥

अब हिंसा का उठ गया राज।
नर, पशु, अण्डज, उष्मज सजीव, इनको नहिं देता दुःख कीव।
सब चलते-फिरते जीव जन्तु, मेरे स्वजाति सब मित्र बन्धु॥
छा गया अहिंसा का स्वराज॥ अब० ॥१॥
यदि कोई को दुख दूँगा मैं, कालान्तर में फल लूँगा मैं।
ऐसा विचार कर सावधान, चलता सु-राह धरि शील ज्ञान॥
नहिं करता कोई का अकाज॥ अब० ॥२॥
आमिष अहार सलवत् अभाव, दुर्व्यसन नशा का गया चाव।
कल्पित देवी भ्रम-भूत पोल, हिंसा अनीति की फुटी ढोल॥
सब शुद्धाचार विचार साज॥ अब० ॥३॥

❀ अहिंसापरमोधर्मः ❀

जीव हतै हिंसा करै, प्रगट पाप शिर होय।
पाप सबन जो देखिया, पुण्य न देखा कोय॥
तिलभर मछरी खाय के, कोटि गऊ दे दान।
काशी करवट लै मरै, तो भी नरक निदान॥
बकरी पाती खात है, ताकर खींचत खाल।
जे नर बकरी खात हैं, ताकर कौन हवाल॥
काजी का बेटा मुआ, उर में सालै पीर।
वह साहेब सबका पिता, भला न मानै वीर॥
मुरगी मोलना सो कहै, जबह करत हौ मोहि।
साहिब लेखा माँगसी, संकट पड़िहैं तोहि॥
खुश खाना है खीचड़ी, माँहि पड़ा टुक लौन।
मांस पराया खाय के, गला कटावै कौन॥
कहता हूँ कहि जात हूँ, कहा जु मानु हमार।
जाका गल तुम काटिहौ, सो फिर काटि तुम्हार॥
हिन्दू के दाया नहीं, मेहर तुरुक के नाहिं।
कहैं कबीर दोनों गये, लख चौरासी माहिं॥
अमल अहारी आतमा, कबहुँ न पावै पार।
कहैं कबीर पुकारि के, त्यागो ताहि विचार॥

(साखी संग्रह)